कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास
को समर्पित

वर्ष 51 अंक : 2 दिसंबर 2004 मूल्य : सात रुपये

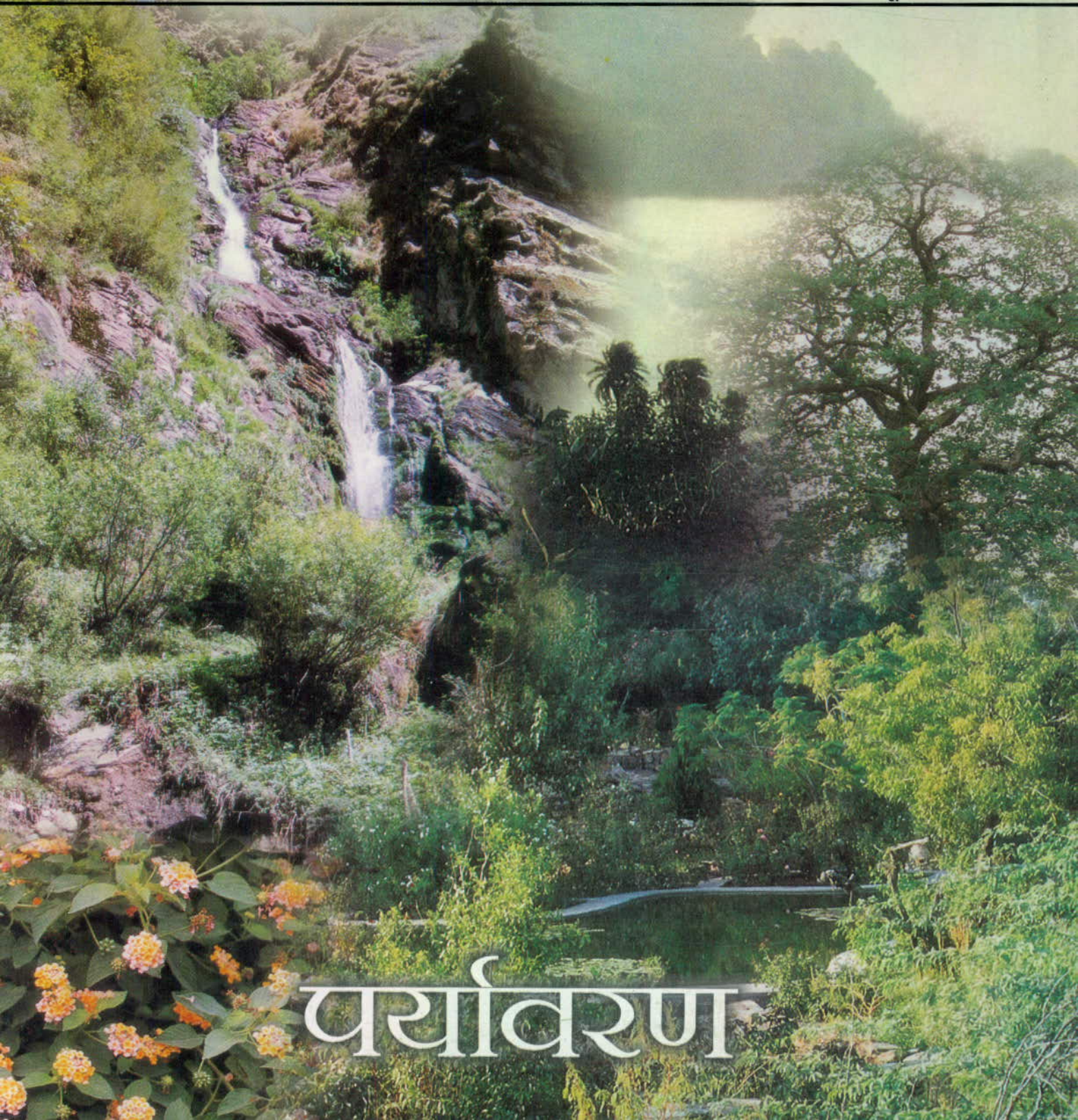

पर्यावरण

प्रधानमंत्री द्वारा "काम के बदले अनाज" के राष्ट्रीय कार्यक्रम का शुभारंभ

प्रधानमंत्री, डा. मनमोहन सिंह ने आज आंध्र प्रदेश में रंगारेड्डी जिले के अलूर गांव में **काम के बदले अनाज के राष्ट्रीय कार्यक्रम** का शुभारंभ किया। इस अवसर पर प्रधानमंत्री ने कहा कि संपूर्ण ग्राम स्वराज का महात्मा गांधी का सपना एक मजबूत पंचायत राज प्रणाली के जरिए गांवों में बच्चों, महिलाएं और आम आदमी को सभी सुविधाएं उपलब्ध कराने से पूरा हो जाएगा। उन्होंने कहा कि जब **काम के बदले अनाज का राष्ट्रीय कार्यक्रम** लागू हो जाएगा, तब गांव स्वावलंबी हो जाएंगे। केंद्र ने गांव में रहने वाले समाज के विभिन्न वर्गों की दशा सुधारने के लिए कई कार्यक्रम लागू किए हैं। बच्चों को शोषण से बचाने और उन्हें शिक्षा प्रदान करने कि लिए केंद्र **सर्व शिक्षा अभियान** चला रहा है। **दोपहर के भोजन के कार्यक्रम** की मदद से इस योजना में गांव मे रहने वाले सभी बच्चों को प्राथमिक, शिक्षा सुनिश्चित हो सकेगी। उन्होंने कहा कि ग्रामीण इलाकों में लोगों, विशेष कर महिलाओं के स्वास्थ्य रक्षा के कार्यक्रमों पर अमल किया जा रहा है।

डा. सिंह ने कहा कि केंद्र सरकार देश में पंचायती राज प्रणाली को मजबूत करने के लिए वचनबद्ध है, जिससे गांवों में रहन–सहन की स्थितियों में सुधार आएगा। उन्होंने कहा कि **काम के बदले अनाज के राष्ट्रीय कार्यक्रम** से सभी गांव वालों की रोटी–कपड़ा और मकान की न्यूनतम आवश्यकताएं पूरी हो सकेंगी। गांवों में सभी सुविधाओं के उपलब्ध होने के बाद लोगों को बेहतर सुविधाओं की तलाश में शहरों की तरफ नहीं भागना पड़ेगा। उन्होंने कहा कि यह काम आसान नहीं है, लेकिन एक सशक्त पंचायती राज प्रणाली के माध्यम से इसे पूरे विश्वास के साथ पूरा किया जा सकता है। उन्होंने नदी जल संसाधनों के उपयोग के आंध्र प्रदेश सरकार के प्रयास में हर मदद देने का आश्वासन दिया।

इस अवसर पर केंद्रीय ग्रामीण विकास मंत्री, डा. रघुवंश प्रसाद सिंह ने कहा कि गांव में रहने वाले गरीबों की रहन–सहन की स्थिति बेहतर बनाने के लिए केंद्र सरकार **इंदिरा आवास योजना, संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना** जैसी कई योजनाएं चला रही है।

इससे पूर्व डा. मनमोहन सिंह ने **काम के बदले अनाज के राष्ट्रीय कार्यक्रम** के शुभारंभ के लिए एक पट्टिका का अनावरण किया और उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में राज्यों द्वारा की गई प्रगति को दर्शाने वाली एक चित्र प्रदर्शनी भी देखी। प्रधानमंत्री ने उन बच्चों के साथ भी बातचीत की, जो विकलांग हैं, जो ब्रिज कोर्स कर रहे हैं और जो स्व–सहायता समूहों से जुड़े हैं।

काम के बदले अनाज के राष्ट्रीय कार्यक्रम से देश के चुने हुए 150 सबसे पिछले जिलों में अतिरिक्त पूरक दिहाड़ी रोजगार उपलब्ध हो सकेगा। केंद्र द्वारा शतप्रतिशत प्रायोजित इस योजना के लिए राज्य सरकारों को केवल ढुलाई खर्च, हैंडलिंग लागत और खाद्यान्नों पर करों को वहन करना होगा। यह कार्यक्रम दिहाड़ी रोजगार के जरूरतमंद सभी ग्रामीण लोगों के लिए खुला है। पांच सालों के दौरान किए जाने वाले सभी निर्माण कार्यों के बारे में एक जिला स्तर परिप्रेक्ष्य योजना तैयार की जाएगी और उस पर अमल किया जाएगा। वर्ष 2004–05 के लिए 2020 करोड़ रुपए नकद और 20 लाख टन खाद्यान्न उपलब्ध कराया जाएगा, जो **संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना** के आबंटनों के अतिरिक्त होगा। पूरे वर्ष के करीब 5400 करोड़ रुपए और 37 लाख टन अनाज की जरूरत पड़ेगी। योजना के तहत लाभार्थियों को प्रत्येक दिहाड़ी के लिए गरीबी की रेखा से नीचे की दरों पर पांच किलोग्राम अनाज उपलब्ध कराया जाएगा। ❑

साभार : प्रेस सूचना कार्यालय

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 51 ● अंक : 2

मार्गशीर्ष–पौष 1926

दिसंबर 2004

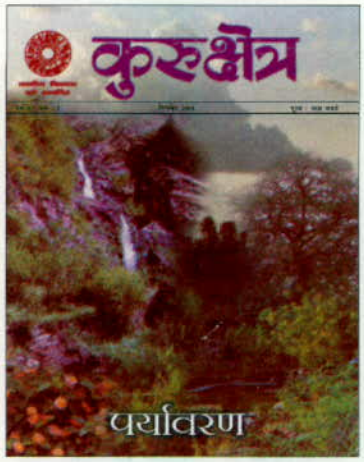

संपादक

स्नेह राय

उप संपादक

जयसिंह

संपादकीय पत्र–व्यवहार

संपादक, **कुरुक्षेत्र**

कमरा नं. 655/661, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23015014,
फैक्स : 011–23015014
तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : dpd@sh.nic.in dpd@pub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)

डी.एन. गांधी

व्यापार व्यवस्थापक

दूरभाष : 24367260, 2436509, 24365610

आवरण

राहुल शर्मा

सज्जा

अजय भंडारी

मूल्य एक प्रति : सात रुपये
वार्षिक शुल्क : 70 रुपये
द्विवार्षिक : 135 रुपये
त्रिवार्षिक : 190 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)
पड़ोसी देशों में : 500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में : 700 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

लेख

- ऐतिहासिक संदर्भ में पर्यावरण प्रदूषण — शिवेंद्र कुमार पांडे — 4
- गांवों में प्रदूषण का बढ़ता कहर रोकथाम के उपाय — डा. नीता गुप्ता — 8
- पर्यावरण प्रदूषण : कारण और निवारण — डा. नरेंद्र पाल सिंह, नवनीत कुमार राजपूत — 12
- पर्यावरण सुधार के लिए पर्यावरण कार्यदल — 17
- गावों के कायाकल्प का संकल्प — वेद प्रकाश अरोड़ा — 18
- 21वीं सदी में दलितों की दशा एवं दिशा — डा. बाल मुकुन्द बघेल — 21
- भारत के आदिवासी जीवन की जुगत में — डा. ऋतु सारस्वत — 25
- ग्रामीण वृद्धों का ठहरता जीवन — आर.बी.एल. गर्ग — 27
- वृद्ध नागरिकों की समस्याएं और कल्याणकारी योजनाएं — डा. राजमणि त्रिपाठी — 29
- मानवाधिकार संरक्षण — नवीन पंत — 32
- एड्स : जानकारी और जागरूकता — अजीत कुमार — 34
- कृत्रिम अंगों का संसार — डा. राजेंद्र कुमार कनौजिया — 36

रोजगार

- घासों में श्रेष्ठ सुगंधीय फसल नींबू घास (लेमनग्रास) — रत्नेश कुमार राव — 40
- हर्बल राज्य में बदलता उत्तरांचल — देवेंद्र उपाध्याय — 43

हमारी संस्कृति

- विलुप्त परंपरा को नया जीवन — हमीदुल्लाह डार — 45

स्वास्थ्य–चर्या

- योग के वैज्ञानिक पहलू — डा. एम.के. मुछाल — 47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में सहायक प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

मत–सम्मत

उत्कृष्ट विशेषांक

पत्रिका का 'सहकारिता विशेषांक' उत्कृष्ट लगा। इसमें सामूहिक भागीदारियों की सफल कहानियों पर प्रकाश डाला गया है। सहकारिता आज भी भारत के विकास को तेजी प्रदान करने की कुव्वत रखती है। यदि भारत की संपूर्ण ग्राम पंचायतों का एक नेटवर्क तैयार किया जाए तो योजनाएं सफलतापूर्वक लागू हो सकती हैं। प्रत्येक ग्राम पंचायत में 'सहकारिता' का विकास किया जाए तथा उसमें अधिकाधिक स्थानीय निवासियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए। वस्तुतः ग्रामीण पंचायतों की दशा अभी भी बहुत खराब है। अधिकांश तो घटिया राजनीति की शिकार भी हैं। अतः यहां पारदार्शिता, सजगता तथा पूर्ण जागरूकता पैदा करने की जरूरत है। गांधीजी के रामराज्य की कल्पना इन्हीं गांवों के उत्थान से ही साकार हो सकती है क्योंकि आज भी भारत ग्राम प्रधान देश है।

घनश्याम कुमार 'देवांश'
श्री वेंकटेश्वर कालेज,
धौलाकुंआ, नई दिल्ली

वार्षिकांक सहकारिता का खजाना

कुरुक्षेत्र का अक्तूबर 2004 वार्षिकांक 'सहकारिता के सौ वर्ष' आवरण पृष्ठ सुंदर और कंधे से कंधा मिला, हाथों से हाथ मिला, मिलजुल कर राष्ट्रीय विकास में सहकार की होती बलवती कार्यशैली और आशा, उमंग से स्वालंबन को साकार रूप देने की ओर इंगित करता है। वहीं सहकारिता के कामों की सफलता को बेबाक प्रस्तुत करना प्रशंसनीय है। यह वार्षिकांक सहकारिता में रुचि रखने वालों के लिए खजाना है।

सांवलाराम नामा
सदर बाजार रोड,
मु.पो. भीनमाल (जालौर), राजस्थान

जानकारी से भरपूर

मैं कुरुक्षेत्र का नियमित पाठक हूं। सितंबर 2004 के अंक में 'भूमंडलीकरण के दौर में शिक्षा पर प्रभाव' तथा अगस्त 2004 का 'भारत में ग्रामीण विकास – एक सिंहावलोकन' ने मुझे बेहद प्रभावित किया तथा मुझे वाध्य किया, पत्र लिखने के लिए, इसलिए कि यह पत्रिका ग्रामीण विकास को समर्पित किसी विशेष क्षेत्र की बात न करते हुए 'ग्लोबल विलेज' तथ्य को चरितार्थ करती है।

संपादकीय का तो कोई सानी नहीं कि इसे पढ़कर व्यक्ति को अपने अंतर्मन में गहन चिंतन न करने को विवश करता हो यह इसमें लिखे एक–एक शब्द से स्पष्ट होता है तथा आगे पढ़ते रहने की जिज्ञासा बनी रहती है। इसमें प्रकाशित 'स्वास्थ्य चर्चा' के तहत दी जा रही जानकारियां अमृतरस के समान प्रतीत होती हैं। तमाम जानकारियों के लिए सहृदय धन्यवाद।

घनश्याम कुशवाहा
ग्राम सरपां, पोस्ट मझवलिया, देवरिया (उ.प्र.)

ग्राम विकास की मार्गदर्शिका

यह पत्रिका वास्तव में ग्राम–विकास को समर्पित है। इधर जबसे मैंने अपने एन.जी.ओ. का रजिस्ट्रेशन कराया है तब से ग्रामीण क्षेत्र की योजनाओं के संबंध में कुरुक्षेत्र को बारीकी से पढ़ना प्रारंभ किया है। आप से अनुरोध है कि विभिन्न योजनाओं के बारे में जानकारी के साथ ही आप कृपया स्वयंसेवी संस्थानों के मार्गदर्शन का भी प्रयास करें। आशा है आप हमारे निवेदन पर विचार करेंगे।

अमितानंद
भारती बुद्धा, लोक कल्याण संस्थान
ग्रा. पो. बड़कागांव, पू. चंपारण (बिहार)

योजना और कार्यक्रमों की व्यापक जानकारी

'कुरुक्षेत्र' का अंक देखा। राष्ट्रीय स्तर पर सरकारी गैर–सरकारी योजनाओं और कार्यक्रमों बड़ी सूक्ष्म और व्यापक जानकारी मिली। ग्रामीण विकास संबंधी योजनाओं के विभिन्न पहलूओं को जानने समझने के लिए कई संबंधित पत्र–पत्रिकाओं का अध्ययन करता रहा हूं जिसमें योजना और कुरुक्षेत्र जैसी पत्रिकाएं भी शामिल हैं।

अशोक सिंह
जागृति मंच, दुमका–814101,
(झारखंड)

विकास योजनाओं का विस्तृत ब्योरा

मैं *कुरुक्षेत्र* का नियमित पाठक हूं, अगस्त 2004 का अंक पूरा पढ़ा। उसमें उल्लिखित "भारत में ग्रामीण विकास – एक सिंहावलोकन" बलकार सिंह पुनिया द्वारा लिखित लेख बहुत अच्छा लगा। अंक में उल्लिखित ग्रामीण विकास की योजनाओं को विस्तारपूर्वक जानने की इच्छा है, क्योंकि पाठक कृषि विज्ञान का विद्यार्थी है, और सिविल सेवा परीक्षा की तैयारी करता है।

आपके द्वारा उन योजनाओं का विस्तार पूर्वक उल्लेख कर दिया जाए तो पाठक आपका बहुत आभारी रहेगा।

विजयबहादुर भारती
ग्राम – संवरूपुर,
पोस्ट – अमुबारी (नरायनपुर)
जिला – आजमगढ़, उ.प्र.

प्रेरणादायक पत्रिका

मैं कुरुक्षेत्र का नियमित पाठक हूं। यह पत्रिका मुझे बेहद पसंद है। इस पत्रिका से मुझे स्वास्थ्य, ग्रामीण विकास योजना और प्रेरणादायक आदि विषयों की विस्तृत जानकारी मिलती है। अक्टूबर का सहकारिता विशेषांक पढ़ा काफी अच्छा लगा। इस पत्रिका की जितनी सराहना करें उतनी ही कम है।

नागेन्द्र कुमार
जिला–अरवल,
बिहार–804421

संपादकीय

वर्ष 2004 का सफल समापन

नये उत्साह, उमंग और उल्लास के साथ करते हैं नव वर्ष 2005 का शुभारंभ

ऐतिहासिक संदर्भ में पर्यावरण प्रदूषण

शिवेंद्र कुमार पांडे

मानव द्वारा औद्योगिकरण की अंधाधुंध दौड़, सारे विश्व में पर्यावरण को प्रदूषित करने लगी है। प्राकृतिक रूप में विद्यमान पारिस्थितिकी में कुछ भी अतिरिक्त घटने को प्रदूषण कहा जाता है और इसके प्रभाव के अंतर्गत, पृथ्वी के सभी जीवन–स्वरूपों (मानव, जीव–जंतु व कीड़े–मकोड़े) की विकास क्रिया में अवरोध उत्पन्न होने लगता है। इस विषय में जागरूकता वृद्धि के कारण, वर्तमान में 'पर्यावरण को संरक्षण प्रदान करना' विश्व के सभी देशों में प्रमुख विषय बन चुका है। अब चूंकि प्रकृति के नियम, मानव द्वारा स्थापित देशों की सीमाओं तक ही सीमित नहीं है, इसलिए 'पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण' एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या है, एक देश की नहीं। अर्थात इसका समाधान, विश्व के सब देशों को मिलकर करना होगा।

मानव के विकास इतिहास पर नजर डालने पर हम पाते हैं कि 'खनन–कार्य', ऐसा प्रथम मानव–प्रयास है, जिसने प्राकृतिक–पर्यावरण को प्रदूषित करने का 'श्रीगणेश' किया था। पाषाण युग के मानव ने खूंखार जंगली जानवरों से अपनी सुरक्षा व भोजन करना प्रारंभ कर प्राकृतिक तंत्र से छेड़–छाड़ आरंभ कर दी थी। फिर जंगलों में लगी आग की शक्ति का भाव होने पर, उसका उपयोग अपनी सुरक्षा व भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए करने लगा। यहां से आरंभ हुआ प्रदूषण और वनस्पतियों के प्रारंभिक दोहन का इतिहास।

अग्नि प्रज्वलन की क्षमता प्राप्त करने के पूर्व तक आदिकाल का मानव जंगली जानवरों से अपनी सुरक्षा की चिंता में रात के अंधेरे में कभी शांतिपूर्वक सो नहीं पाता था। वह हमेशा सूर्य–प्रकाश की प्रतीक्षा करता रहता था कि कब सुबह हो और उसे अपनी सुरक्षा का कुछ भान होने लगे। ठंडे प्रदेश के निवासी तो सूर्योदय की प्रतीक्षा और अधिक बेसब्री से

करते थे, ताकि सौर ताप, उन्हें ठंड से कुछ राहत प्रदान करे।

गुफा मानव, दक्षिणी–मुखी गुफाओं को निवास के लिए चुनते थे, ताकि दिन के समय सूर्य की रोशनी का संपूर्ण लाभ उठा सकें, क्योंकि सूर्य पूर्व से पश्चिम की ओर, दक्षिण दिशा से होकर घूमता है। इस क्रिया में सूर्य की रोशनी का ताप, गुफाओं की दीवार व फर्श को गरम कर देती है और रात में ठंड बढ़ने पर उनमें समाई ताप–ऊर्जा निर्मुख होकर गुफाओं को गरम रखती है। इस प्राकृतिक क्रिया का उपयोग, गुफा–मानव अपने सामयिक ज्ञान के अनुरूप बखूबी करता था।

इस दृष्टि से विवेचना करने पर हम पाते हैं कि पत्थरों के हथियार गढ़ना, मानव द्वारा प्रौद्योगिकी अपनाने का प्रथम सफल प्रयास था, जिसने पर्यावरण प्रदूषण को जन्म दिया। परंतु अग्नि प्रौद्योगिकी का उपयोग पर्यावरण को अधिक नुकसान पहुंचाने लगा– जंगल काटने का क्रम आरंभ हुआ व लकड़ी जलाने से धुआं प्रसारण में वृद्धि होने लगी।

पाषाण–युग समाप्त होने तक, मानव को बीजों के माध्यम से कृषि उत्पादन करने का ज्ञान प्राप्त हो चुका है। परंतु उसे उर्वरकों का ज्ञान नहीं हो पाया था। इसलिए एक स्थान की जमीन अन–उपजाऊ होने पर, उसे एक अन्य नए उपजाऊ क्षेत्र की तलाश में निकलना पड़ता था। इस बीच मानव ने बैल, घोड़े व गधों को पालतू बनाकर, उनकी शक्ति का उपयोग करने की सुविज्ञता भी प्राप्त कर ली थी। फलस्वरूप, उसकी गतिशीलता में वृद्धि हो गई थी और वह नए स्थानों में शीघ्रता से पहुंचने में सक्षम हो चुका था। अर्थात् एक नए क्षेत्र में जंगलों को काटने व जलाने की गति तीव्रतर होती रही।

सुरक्षा की दृष्टि से, मानव प्रारंभ के दिनों से ही बनजारों के समान छोटे–मोटे समूहों में इधर–उधर भटकता फिरता था। कृषि कार्य ने इस भटकने के अंतराल में कुछ वृद्धि आरंभ कर दी थी, जिसके कारण मानव समूहों द्वारा एक स्थान पर टिके रहने की परंपरा आरंभ होने लगी।

धीरे–धीरे मानव को जैव–उर्वरकों के विषय में ज्ञात होने लगा। अब मानव, एक स्थान पर लंबे समय तक रहने में सक्षम हो गया था, जिसके फलस्वरूप पृथ्वी के गर्म क्षेत्रों में, जहां कहीं यानी प्राकृतिक रूप में स्थायी तौर पर उपलब्ध था, वहां मानव सभ्यताओं का उद्‌भव होने लगा : सुमेरिया– चाल्डा, माया, यूनानी, सरस्वती–सिंधु घाटी आदि।

जनसंख्या वृद्धि के दबाव में अधिक से अधिक भूक्षेत्र को कृषि उपयोग में लाने के क्रम में जंगल कटते चले गए, जो भू–क्षरण रोकने/मृदा को जैविक समृद्धता प्रदान करने/भूजल भंडारण/तापमान निम्न करने/वायु प्रदूषण नियंत्रण/आदि में सक्रिय भूमिका निभाते हैं। वनस्पतियों के अभाव में, कृषि के लिए नितांत आवश्यक उपजाऊ मृदा का भौतिक सुरक्षा–कवच घटता चला गया। फिर ऐसे क्षेत्रों को प्राकृतिक ऊर्जा स्रोतों (ताप, प्रकाश, पवन, वृष्टि, ध्वनि) के प्रहार निरंतर झेलते रहने के कारण, वहां पनपी प्राचीन सभ्यताएं शनैः शनैः कर गर्त में समाते हुए, इतिहास का पन्ना मात्र बनकर रह गई। इसलिए किसी दार्शनिक ने ठीक कहा है कि 'सभ्यताएं जंगलों का अनुसरण करती हैं, परंतु अपने पीछे रेगिस्तान छोड़ जाती हैं।'

इसके बावजूद अपनी सुख–सुविधा वृद्धि के लिए मानव नए–नए प्रकार की प्रौद्योगिकी विकसित कर अपनाता रहा है, जिनमें ऊर्जा निवेश की प्रमुख भूमिका होती है। कांस्य युग (3000 ई.पू.) से लेकर 1750 ए.डी. तक प्रौद्योगिकी विकास का आधार मुख्यतः 'चारकोल' (लकड़ी का कोयला) दहन से प्राप्त ताप ऊर्जा थी।

परंतु ऊर्जा क्षेत्र में एक आमूल परिवर्तन का आरंभ ब्रिटेन में हुई 'औद्योगिक क्रांति' (1750) से हुआ, जब जेम्स वाट ने कोयला दहन से प्राप्त 'भाप शक्ति' को खोज निकाला। कोयले में निहित प्रचुर उष्मा ज्ञान ने, इसके व्यापक उपयोग को बढ़ावा दिया। नए कारखानों व औद्योगिक नगरों का उद्‌भव होने लगा। इसके कारण आधारभूत विकास की प्रक्रिया तीव्रतर होती चली गई। नई सड़कों/नहरों/रेलवे लाइनों/पुलों/बिजली घरों/ आदि का निर्माण होने लगा, ताकि कच्चे माल व निर्मित सामानों को दूर–दराज के स्थानों में उपभोक्ताओं तक पहुंचाया जा सके। फिर कोयले का महत्व केवल इसलिए नहीं है कि वह जल सकता है और ताप उत्पन्न करता है। यह एक अद्‌भुत कार्बनिक पदार्थ है, जिसकी उपयोगिता दहन के अलावा, उसे कार्बनीकरण, हाइड्रोजनेशन और विशेष अभिक्रिया जैसी विधियों द्वारा उपयोग में लाने पर हमें नाना प्रकार के उपोत्पाद प्राप्त होते हैं, जिन्हें जाने–अनजाने हम अपने दैनिक जीवन में प्रतिदिन उपयोग करते हैं, जैसे प्लास्टिक, नाइलान, दवाईयां, खुशबू, रंग, साबुन, वनस्पति घी, रसोई गैस, एंटिसेप्टिक, बिजली, सिमेंट, आदि (कोलतार से लगभग दो लाख उपोत्पाद)। इन उपोत्पादों के निर्माण के लिए विशिष्ट प्रौद्योगिकी आधारित कल–कारखानों के निर्माण का क्रम आज भी गतिमान है। आधुनिक मापदंडों के अनुसार, विश्व के किसी भी देश की औद्योगिक प्रगति का मूल्यांकन, कोयला व लौह खनिज खपत के आधार पर किया जाता है।

इस बीच वर्ष 1859 में तेल व प्राकृतिक गैस उत्पादन के लिए इ.एल. ड्रेक ने पेंसिलवेनियां (अमेरिका) में प्रथम नलकूप खोद डाला। 19वीं सदी के अंत तक वाष्प इंजनों से बेहतर व अधिक शक्तिशाली इंटरनेशन–कंबसचन इंजन बाजार में आ गए थे। इनके पदार्पण से यातायात व औद्योगिक क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन होने लगा।

इस प्रकार के प्रौद्योगिकी विकास के क्रम में दैनिक उपयोग के कई यांत्रिक उपकरणों (ट्रेक्टर, कार, बस, फ्रिज, आदि) की भरमार, विश्व बाजार में छा चुकी है। आज सर्वसाधारण भी यह जानने व समझने लगा है कि इनका निरंतर उपयोग, पर्यावरण–प्रदूषण में वृद्धि करता जा रहा है, जो समस्त जीव–जगत (मानव भी शामिल) के विनाश का कारक बन सकता है– डयनासौर के समान, जो 6.5 करोड़ वर्ष पूर्व, पृथ्वी से विलोप हो गए।

इस प्रकार के सामूहिक–विलोपन की पांच विशिष्ट घटनाएं (डयनासौर शामिल), पृथ्वी के 450 करोड़ वर्ष लंबे जीवन इतिहास में घट चुकी हैं। परंतु इन घटनाओं के मध्य करोड़ों वर्षों का अंतराल स्थापित है और ये प्राकृतिक अपदाओं से घटी थीं– प्रतिकूल जलवायु, खाद्य पदार्थों में कमी, घातक कासमिक किरणें, संघातिक उल्कापात, आदि।

परंतु आज का मानव, प्रकृति द्वारा प्रदान की गई क्षमता (बुद्धिबल) के आधार पर समस्त पृथ्वी में अपना अधिपत्य स्थापित कर एक अनियंत्रित मशीन के समान कार्य कर रहा है। उसका उद्देश्य है, केवल अपनी सुख–सुविधा में वृद्धि करते रहना। प्रकृति द्वारा स्थापित, 'जीयो व जीने दो' जैसे साधारण नियमों (जिसमें सहअस्तित्व का विधान निहित है) की अनदेखी कर स्व–विकास की ओर केंद्रित है। यह कर्म, अपने पैर में कुल्हाड़ी मारने जैसा कार्य है। इसके प्रतिकूल परिणाम भी अब प्रगट होने लगे हैं। उदाहरण के लिए–

''ब्रिटेन में स्थापित विधा के अंतर्गत, जैव–विविधता सर्वेक्षण कार्य व उसके प्रलेखन को विश्व भर में एक आदर्श की मान्यता प्राप्त है। वहां के वैज्ञानिकों ने साइंस–जनरल में प्रकाशित एक ताजा रिपोर्ट में कहा है कि, पृथ्वी में छठे सामूहिक–विलोपन की प्रक्रिया आरंभ हो चुकी है। इस निष्कर्ष का प्रमुख आधार है, ब्रिटेन में तितली प्रजातियों का द्रुत गति से घटना। जबकि अभी तक यह मान्यता रही है कि उड़ने वाली प्रजातियां, बदलते पर्यावरण में, अपनी सुरक्षा के लिए पर्यावरण अनुकूल क्षेत्रों की ओर पलायन करने में सक्षम हैं। फिर यह देखने में भी आता है कि साइबेरियन पक्षियों के समान (मौसम के अनुरूप) तितलियां भी कनाडा से मैक्सीको की उड़ान प्रति वर्ष भरती हैं।

इस रिपोर्ट के अनुसार ब्रिटेन की स्थानीय जैव विविधता का स्तर–असाधारण गति से घटता जा रहा है (प्रजातियों की संख्या में कमी) :

- 1254 पेड़–पौधों में से 28 प्रतिशत की कमी पिछले 40 वर्षों में हुई है,
- 201 पक्षियों में से 54 प्रतिशत की कमी 20 वर्षों में हुई,
- 58 तितलियों में से 71 प्रतिशत की कमी 20 वर्षों में हुई है।

इन वैज्ञानिकों का कहना है कि इसके लिए स्वयं मानव ही जिम्मेवार है, जिसने अपने बुद्धिबल के आधार पर, आज पृथ्वी में अपना वर्चस्व स्थापित कर रखा है। इस विशिष्ट प्रजाति ने अपने स्वार्थ में पृथ्वी के संसाधनों का अंधाधुंध दोहन व अपव्यय करते हुए, प्रकृति की अन्य संतानों के लिए जीवन दूभर बना दिया है। रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि मानव गतिविधियों के कारण ही इस

अवनति को गति मिल रही है। फलस्वरूप हम इससे भी कहीं ज्यादा, जैव–विविधता अगले 20 वर्षों में खो चुके होंगे।

छठे सामुहिक–विलोपन का यह संदेश, स्वयं मनुष्य के अस्तित्व के लिए खतरों का निर्माण कर रहा है, क्योंकि मानव भी प्रकृति की संतान है: सृष्टिकर्ता नहीं। इसलिए वर्तमान विश्व–परिदृश्य में समस्त पारिस्थितिकीय तंत्र को युद्धस्तर पर संरक्षण प्रदान करना, मानव का प्रथम कर्त्तव्य होना चाहिए।

इस निष्कर्ष पर आधुनिक मानव आज पहुंचा है। परंतु इस गतिशील प्राकृतिक विधान के अंतर–रहस्य का संपूर्ण ज्ञान हमारे विद्वान पूर्वज (जिन्होंने वेद/पुराण/उपनिषद, आदि रचे थे) हजारों वर्ष पूर्व प्राप्त कर चुके थे। इसका कारण है कि वे असाधारण स्तर के दूरदर्शी वैज्ञानिक थे और उनके ज्ञान/विज्ञान से कोई भी क्षेत्र अछूता नहीं था, चाहे वह पारिस्थितिकी, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, शिल्प, रसायन, प्रौद्योगिकी, आदि जैसे विषय क्यों न हों।

वे (ऋषि/मुनि), अपने ज्ञान के आधार पर यह भली–भांति समझ चुके थे कि समाज में सभी वैज्ञानिक नहीं बन सकते। इसलिए, समाज–कल्याण के प्रति समर्पित इन विद्वानों ने अपने उत्कृष्ट ज्ञान को व्यवहारिक रूप में जन–उपयोगी स्वरूप प्रदान कर, स्थायित्व प्रदान करने के लिए, अनेकों नियम बना कर उन्हें कर्म का आचरण बनाते हुए शुभ–अशुभ, पाप–पुण्य, स्वर्ग–नरक, धर्म–अधर्म के साथ जोड़ दिया। उद्देश्य था कि 'समाज का प्रत्येक नागरिक इन सरल नियमों का पालन करते हुए पारिस्थितिकीय को यथावत व सुदृढ़ रख कर स्वविकास की ओर कदम बढ़ाता रहे।' यह भी, उनकी जन–कल्याण से ओतप्रोत वैज्ञानिक चिंतन–धारा।

भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि आधारित रही है व रहेगी। कारण भारत के ऊपर प्रकृति की असीम कृपा रही है, चाहे वह कृषि के लिए उत्तम जलवायु व उपजाऊ मृदा की बात हो, या भूजल भंडारण के लिए स्थलाकृतिक परिवेश की विविधता क्यों न हो। फिर विश्व में पाए जाने वाले 14 बायोम्स (एम समान जलवायु विषयक क्षेत्र) में से, 10 भारत में पाए जाते हैं। फलस्वरूप, भारत की गिनती विश्व में कुछ एक बचे 'जैव–समृद्धता भरे प्रदेशों' में की जाती है।

'पिछले दिनों इंडियन नेशनल अकादमी आफ इंजीनियर्स ने चंडीगढ़ में नेनो–टेकनॉलॉजी विषय पर एक अंतर्राष्ट्रीय गोष्ठी का आयोजन किया। इस गोष्ठी में पंजाब विश्वविद्यालय के वनस्पति–विज्ञान विभाग ने एक शोध–पत्र प्रस्तुत किया। उनके शोध का आधार था : सभी जीवंत स्वरूपों में रसायनिक क्रिया द्वारा ऊर्जा ग्रहण करने की क्षमता होती है। इस सिद्धांत का उपयोग गेहूं की फसल वृद्धि में किया है (वह भी, बिना जेनेटिक प्रत्यारोपण तकनीक अपनाए)। इस प्रयोग में फसल पकने के दौरान सक्रिय अनकंपलर–प्रोटीन्स की कार्य–अवधि को 3/5 दिनों तक बढ़ाने के लिए दो रसायन, फसल में प्रवेश कराए। फलस्वरूप 10 प्रतिशत फसल वृद्धि संभव हुई।'

अब हम जैव–प्रौद्योगिकी उत्पादन के युग में प्रवेश कर चुके हैं और अत्यंत निकट भविष्य में 60 प्रतिशत से ज्यादा विश्व–व्यापार इसी क्षेत्र में होने लगेगा। भारत अपने प्रयासों (अनुसंधान व विकास) के माध्यम से इस क्षेत्र में भी विश्वस्तरीय कुशलता प्राप्त कर चुका है। फिर समृद्ध पश्चिमी देशों के विपरीत, भारत के पास कम खर्च में कार्य करने वाले कुशल लोगों की कमी भी नहीं है। भारत में इस उद्योग का विकास होने पर, भारतीयों की इनफोटेक क्षेत्र में अर्जित वर्तमान सफलता भी बौनी प्रतीत होने लगेगी।

परंतु सूचना प्रौद्योगिकी के समान, हमारे कुछ गिने–चुने शिक्षित–वैज्ञानिक इसे अकेले, एक बृहत् भौतिक स्वरूप नहीं प्रदान कर सकते हैं। इसके लिए उन्हें, भारत में उपलब्ध विशाल मानव व पशु शक्ति का इष्टतम सदुपयोग करना होगा। फिर प्रकृति का एक बहुत साधारण नियम भी है – 'एक विशिष्ट पर्यावरण प्रतिवेश में योग्यतम की उत्तरजीविता और उनका समूलनाश, जो अपने चारों ओर फैले साधनों (यहां पर मानव संख्या, पशु शक्ति, जैव विविधता व ज्ञान भंडार) का उपयोग नहीं कर पाते।'

पिछले दो दशकों से कई भारतीय स्वयंसेवी संगठन, पंजगव्य आधारित प्राचीन कृषि व औषधि क्षेत्र में सक्रिय हो, विभिन्न प्रांतों में सफल आर्थिक प्रदर्शन कर रहे हैं। इन प्राचीन विधियों को अपनाने के फलस्वरूप स्थानीय स्तर पर (जहां अपनाई जा रही है) उपजाऊ माटी जैव उर्वरकता समृद्ध हुई है, भूजल भंडार समृद्ध लेकर उपर उठे हैं, मृदाक्षरण रुक गया है, जल–प्रदूषण को रोका जा सकता है, मानसून आधारित कृषि क्षेत्रों में साल–भर सिंचाई के लिए पानी उपलब्ध रहने का कारण अन्य मौसम में भी फसल उगाना संभव हो गया है, रसायनिक उर्वरकों का उपयोग बंद हो गया है व रसायन मुक्त/स्वादिष्ट खाद्यान्नों का उत्पादन बढ़ा है, जल–स्तर उपर उठने के कारण उसकी पंपिंग ऊर्जा खर्च में कमी होने लगी है, आदि अनेक लाभ स्थानीय किसानों को मिलने लगा है। इसका लाभ आस–पास के ग्रामीण निवासी भी उठने लगे हैं। लेकिन इस ज्ञान को जनजागरण के माध्यम से संपूर्ण भारत में स्थापित करना होगा।

इतना ही नहीं, अब तो ऐसा स्पष्ट ज्ञात होने लगा है कि इन प्राचीन भारतीय ग्रंथों का अध्ययन कर, अपने शोध कार्यक्रम (कोई भी विषय) निर्माण कर आगे बढ़ने का प्रयास करने वाले विद्वानों को वैश्वीकरण के प्रभाव में उभरती फोटोफिनिश जैसी पेंटेट–प्रतिस्पर्धा दौड़ में, उन दूसरों पर बढ़त प्राप्त हो सकती है, जिन विद्वानों का शोध आधार ये ग्रंथ नहीं हैं।

स्वामी विवेकानंद जब जापान गए, तो वहां एक जापानी ने उनसे प्रश्न किया– 'आप कहते हैं कि भारत के पास वेद–पुराण– उपनिषद जैसे दुनिया के श्रेष्ठतम ग्रंथ हैं। फिर भी भारत एक पिछड़ा हुआ देश क्यों है?' स्वामीजी ने उत्तर दिया : 'बंधु, जब किसी व्यक्ति के हाथ में बढ़िया से बढ़िया बंदूक हो, परंतु वह उसे चलाना ही न जानता हो, तो उसमें बंदूक का क्या दोष है। इसी प्रकार यदि भारतीय अपने श्रेष्ठ ग्रंथों को न पढ़ें, उनसे सबक न लें, तो उसमें ग्रंथों का क्या दोष है।' वह जापानी उनके इस उत्तर से इतना प्रभावित हुआ, कि वह उनका शिष्य बन गया।

लगभग यही परिदृश्य आज भी भारत में विद्यमान है। आधुनिक बनने व दिखने के प्रयास में और इन ग्रंथों में भरे उत्कृष्ट वैज्ञानिक ज्ञान की जानकारी न होने के कारण, इनका अध्ययन करने वालों को आदिकालीन धार्मिक अंधविश्वास ग्रसित, पिछड़ा हुआ व्यक्ति समझा जाता है।

परंतु यह हर्ष का विषय है कि हाल के वर्षों में भारतीय वैज्ञानिक और तकनीकी विशेषज्ञ इस

ओर ध्यान देने लगे हैं। कई भारतीय अनुसंधान केंद्रों में इन प्राचीन विधियों की सत्यता को आधुनिक वैज्ञानिक मापदंडों के अनुरूप प्रमाणित कर प्रस्तुत किया जाने लगा है।

पेटेंटों की अनिवार्यता का महत्व समझ आने पर भारत सरकार ने 'ट्रेडिशनल नॉलिज डिजिटल लाइब्रेरी' (TDKL) संस्था का गठन किया है। इस संस्था ने अभी तक 36,000 आयुर्वेदिक ग्रंथों का पांच अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं में अनुवाद प्रस्तुत किया है। 'विश्व बौद्धिक संपदा संस्थान' ने इस प्रकार के दस्तावेजों को पेटेंट प्राप्त करने के लिए आदर्श–ग्रंथाकार (माडल फार्मेट) की मान्यता प्रदान की है। परंतु अभी भी 3 करोड़ पांडुलिपियों को इस फार्मेट में प्रस्तुत करना शेष है : प्रयास जारी हैं।

उल्लिखित चर्चा से स्पष्ट हो जाता है कि मानव द्वारा उच्चस्तरीय प्रौद्योगिकी विकसित कर उपयोग करने के क्रम में पर्यावरण–प्रदूषण में शनैः शनैः वृद्धि होती रही। इस ज्ञान के उभरने के अनुरूप, बुद्धिमान मानव ने औद्योगिक विकास के साथ–साथ पर्यावरण को स्वच्छ बनाए रखने के लिए, नई–नई प्रौद्योगिकियों/तकनीकों का विकास भी किया है। परंतु ये खर्चीली विधियां हैं। इसलिए स्वभाव से स्वार्थी मानव, तत्काल मुनाफा प्राप्त करने के लिए, थोड़ा सा भी सुयोग मिलने पर, इन्हें बिना अपनाए, उद्योग स्थापित करता जा रहा है। इसलिए वर्तमान परिदृश्य में यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि औद्योगिक प्रदूषण को नियंत्रित करने के लिए आवश्यक पूंजी निवेश को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाए। इसके अलावा पारिस्थितिकी को यथावत बनाए रखते हुए विकासरत रहने के प्रतिबोध को जनसाधारण के मध्य जागृत कर स्थापित करना होगा, जैसा कि हमारे विद्वान पूर्वजों ने किया था।

वर्तमान विश्व परिदृश्य में सर्वत्र भूजल संकट के बादल मंडराने लगे हैं। विशेषज्ञों की राय में भूजल भंडारों को समृद्ध करने के लिए सभी देशों में जल–संभर–प्रबंध कौशल उपायों को अभी से प्राथमिकता दी जानी चाहिए। अन्यथा अत्यंत निकट भविष्य में जल भंडारों पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए देशों के मध्य युद्ध होने लगेंगे, जैसा वर्तमान में तेल को लेकर हो रहा है।

जल–संभर प्रबंध कौशल (वाटर शेड मैनेजमेंट) में, विद्यमान स्थलाकृतिक परिवेश के अनुरूप स्थानीय मूल की वनस्पतियों (पेड़–पौधों, झाड़ी, घास आदि) के रोपण द्वारा, उस स्थान विशेष को वहां की जलवायु अनूरूप एक प्राकृतिक सुरक्षा कवच प्रदान करते हुए कई अत्यंत सरल भूमि–सुधार कार्य अपनाने होते हैं, जैसे कंटूर बडिंग, मेढ़ व ढाल निर्माण, भूमि का समतलीकरण, खरपतवार निष्कासन, खड्डों की घेराबंदी कर उन्हें छोटे–छोटे बड़े तालाब का रूप प्रदान करना और प्राकृतिक ढाल का उपयोग करते हुए नालियों का निर्माण ताकि वर्षा का पानी जलाश्यों में पहुंचता रहे आदि–आदि। इन्हें कार्यरूप प्रदान करने के लिए मानव श्रम और पशु शक्ति सबसे उपयुक्त साधन है, जिसकी भारत में कमी नहीं है। इन विधियों को अपनाना आज अनिवार्य बन चुका है और इसके माध्यम से ही भारत में सर्वत्र रोजगार के द्वार खुल जाएंगे वे देश खुशहाली का वातावरण छा जाएगा।

इन्हें अपनाने पर, भूमि की उपरी उपजाऊ मृदा परत को सुरक्षा, भूजल भंडार पुनःपूरण क्रिया प्राकृतिक रूप में सक्रिय रहेगी व पारिस्थितिक संतुलन स्थापित रहेगा। हमारे प्राचीन ग्रंथों में इस विषय को लेकर भी अथाह ज्ञान उपलब्ध हैं और वे ही सब विधियां आधुनिक जल–संभर कौशल प्रबंध कौशल में अपनाई जा रही हैं।

पारिस्थितिकीय संतुलन को स्थापित रखने में वनस्पतियों की उपस्थिति एक निर्णायक की भूमिका निभाती है। इसलिए आचार्य चरक (आयुर्वेद विज्ञान के जनक) कह गए हैं – "यस्य देशस्ययोजंतुस्तज्जं तस्यौबधं हितम" अपनाना ही एक सर्वोत्तम पारिस्थितिकीय विधि है। अर्थात जो भी जीवन स्वरूप, जिस देश (विशिष्ट जलवायु प्रदेश) में प्राकृतिक रूप में पनपते हैं, वे ही वहां के देशवासियों के लिए हितकारी होते हैं। आधुनिक पारिस्थितिकी विज्ञान व हमारा अनुभव भी हमें अवगत करा चुका है कि एक सर्वथा विपरीत जलवायु प्रदेश की वनस्पति को एक नए बायोम्स में स्थापित करने पर, वे स्थानिय वनस्पतियों पर हावी हो कर उनके विकास में बाधक बन जाते हैं।

भारत में पिछले 14–15 वर्षों से अच्छी मानसून वृष्टि होते रहने के कारण खाद्यान्न भंडार भरे पड़े हैं, फिर भी देश के भीतर सूखे का प्रभाव फैलता जा रहा है। इसका प्रमुख कारण है – जंगलों का घटता विस्तार और कृषि उत्पादन बढ़ाने के प्रयास में रसायनिक खाद्य/कीटनाशकों का बढ़ता उपयोग। इनके सम्मिलित प्रभाव के अंतर्गत निम्नलिखित परिदृश्य भारत में उभरने लगा है:–

- उपजाऊ मृदा की उत्पादन क्षमता क्षीण होती जा रही है, (अर्थात् प्रति वर्ष अधिक उर्वरकों की आवश्यकता)
- मृदा क्षरण की गति तीव्रतर होती जा रही है (अर्थात् कुल कृषि भूमि में कमी होते रहना)
- भूजल भंडारण की प्राकृतिक क्षमता घटने लगी है,
- भूजल का स्तर नीचे की ओर खिसकता जा रहा है, क्योंकि रसायनिक खाद अपना इष्टतम लाभ प्रदान करने के लिए अधिक मात्रा में पानी मांगती है,
- रसायनिक–खाद/कीटनाशकों के बढ़ते उपयोग से कई आवंछनीय हानिकारक तत्व समस्त फूड–चेन और जल भंडारों में प्रवेश कर सभी जीवंत स्वरूपों को हानि पहुंचाने लगे हैं,
- नीचे गिरते जा रहे भूजल–स्तर से पानी खींचने के लिए (पंपिंग) अनावश्यक ऊर्जा खर्च में वृद्धि हो रही है, आदि।

भारत में वनों का विस्तार घटते हुए 12 प्रतिशत तक पहुंच गया है, जबकि एक आदर्श स्थिति में किसी भी क्षेत्र के 33 प्रतिशत भू–भाग में वनों का विद्यमान होना आवश्यक माना गया है।

जहां तक उपजाऊ मृदा के निर्माण का प्रश्न है, उसकी 2.6 सेंटीमीटर मोटी परत निर्माण में 500 से 1000 वर्षों का समय लगता है (भारत जैसे उष्णकटिबंधी देशों में निम्नतर समय और शीतोष्ण देशों में अधिकतम समय)। परंतु इस कार्य में केवल प्रकृति ही हमारी सहायता कर सकती है (जलवायु व वनस्पतियों के माध्यम से)।

उल्लिखित नियति (प्राविडंस) का ज्ञान, हमें एक भयावह–वास्तविकता का बोध कराता है कि 'हम करोड़ों रुपया खर्च करने पर भी, उपजाऊ मृदा कहीं से भी नहीं खरीद सकते हैं।' अर्थात हमें अपने विकास कार्यों को कुछ इस प्रकार अंजाम देना चाहिए कि इस मूल्यवान मृदा–संपदा के एक कण का भी क्षरण न हो और उसके उपयोग व पुनः उपयोग के द्वार हमारे लिए सदैव खुले रहें। इस प्रकार की व्यवस्था, प्राकृतिक नियमों का पालन करते हुए अवश्य निर्माण की जा सकती है। ❑

(लेखक कोल इंडिया लिमिटेड के सेवानिवृत्त मुख्य महाप्रबंधक और भू–वैज्ञानिक हैं।)

गांवों में प्रदूषण का बढ़ता कहर

रोकथाम के उपाय

डा. नीता गुप्ता

मनुष्य और पर्यावरण का सदियों से एक अटूट रिश्ता रहा है लेकिन मनुष्य ने अपने अस्तित्व के नाम पर, विकास के नाम पर अथवा वैभवशाली बनने के लिए प्रकृति के साथ जो निर्दयता दिखाई है उससे न केवल पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ना शुरू हुआ बल्कि प्रकृति और मनुष्य के बीच घनिष्ठ रिश्ता अब दुश्मनी में परिवर्तित होना शुरू हो गया है। मनुष्य द्वारा प्रकृति पर किए गए अतिक्रमण ने वायु, जल और मिट्टी को बुरी तरह प्रदूषित किया है। तेजी से बढ़ते औद्योगीकरण और शहरीकरण के कारण आज न केवल शहरी क्षेत्रों में ही सांस लेने के लिए शुद्ध वायु का अकाल हुआ है बल्कि इसके प्रभाव से हमारे गांव भी अछूते नहीं बचे हैं। जल की धाराओं के अतिरिक्त गांवों के आस–पास के तालाब और पोखर भी आज बुरी तरह प्रदूषित हो चुके हैं। जो नदियो और जलाशय मानव सभ्यता के उद्भव के लिए आदर और श्रद्धा के पात्र थे आज उनका जल तक पीने योग्य नहीं बचा है। समुद्र तक का जल समुद्री जहाजों के रिसने वाले जहरीले अवयवों और रासायनिक पदार्थों के मिलते रहने के फलस्वरूप काफी हद तक प्रदूषित हो गया है। घरों के कूड़े–कचरे तथा कारखानों से निकले अपशिष्ट पदार्थों ने मिट्टी की परतों और भूगर्भ तक को विसंक्रमित कर दिया है। रेडियो, टी.वी., कूलर जैसे घरेलू उपकरणों के अलावा मोटर वाहनों को शोर, लाउडस्पीकरों की तेज आवाज आदि से जो प्रदूषण हो रहा है उसने भी शहरों के साथ–साथ गांवों तक को अपनी चपेट में ले लिया है।

स्वतंत्रता के उपरांत देश में हुए औद्योगिक विकास ने जो अभी तक विशेष रूप से शहरी

क्षेत्रों में ही केंद्रित रहा है, ने संबंधित क्षेत्रों में वायु प्रदूषण एवं ध्वनि प्रदूषण के साथ–साथ भूमि प्रदूषण की समस्या को गंभीरतम बना दिया है। यद्यपि शहरी क्षेत्रों की तुलना में ग्रामीण क्षेत्रों में जल, वायु एवं ध्वनि प्रदूषण की समस्या अभी इतनी अधिक विकराल नहीं है। लेकिन खेतों में पैदावार बढ़ाने के लिए रासायनिक उर्वरकों का अंधाधुंध प्रयोग एवं कीटनाशकों का अनियंत्रित इस्तेमाल, सिंचाई के साधनों के अवैज्ञानिक प्रयोग आदि से भूमि एवं मिट्टी प्रदूषण की समस्या गंभीर रूप धारण करती चली जा रही है। इन विभिन्न प्रकारों के प्रदूषण और उनके लिए उत्तरदायी कारणों पर यदि दृष्टिपात करें तो विदित होता है कि मानवीय गतिविधियों द्वारा सबसे अधिक प्रकोप वायु प्रदूषण का है और उनके बाद जल, भूमि और ध्वनि हमारे पर्यावरण को विषाक्त और प्रदूषित कर रहे हैं।

सामान्य तौर पर वायु प्रदूषण से तात्पर्य एक ऐसी स्थिति से है जिसमें बाह्य वातावरण में उपलब्ध वायु में उसमें मिले हुए विभिन्न अवयवों में असंतुलन पैदा होने के साथ उसमें कुछ हानिकारक तत्व भी मिल जाते हैं जो मनुष्य, जीव–जंतुओं तथा वनस्पति जगत के लिए हानिकारक हैं। आमतौर पर वायु में 78 प्रतिशत नाइट्रोजन, 21 प्रतिशत आक्सीजन, .03 प्रतिशत कार्बन डाई आक्साइड तथा .5 से 1 प्रतिशत तक जल वाष्प मिली रहती है लेकिन इस मिश्रण में गड़बड़ी हो जाने से वायु प्रदूषित हो जाती है। वायु के प्रदूषण के लिए सबसे अधिक कार्बन–मानोक्साइड, सल्फर डाई आक्साइड तथा नाइट्रोजन के आक्साइड के सस्पेंडेड पर्टिकुलेट मैटर (एस.पी.एम.) की अधिकता उत्तरदायी है जो आम तौर पर कोयला, लकड़ी, डीजल, पेट्रोल आदि ईंधनों के जलाने से, मोटर वाहनों से निकलने वाले

धुएं, कल–कारखानों से उत्पन्न होने वाले धुएं आदि अन्य पदार्थों से उत्पन्न होकर वायुमंडल में दिन प्रतिदिन बढ़ कर मिल रहे हैं। इस वायु प्रदूषण से क्षयरोग (टी.बीं.), फेफड़ों का कैंसर, दृष्टि रोग, श्वास रोग, एलर्जी आदि रोगों में बढ़ोत्तरी हो रही है। इसके अलावा रक्तचाप, हृदय रोग, मानसिक तनाव के रोगियों की संख्या में भी इसके कारण वृद्धि होती जा रही है। वनों के निरंतर द्रुत गति से हो रहे विनाश ने भी वायु प्रदूषण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज वनों का लगभग 14 करोड़ हेक्टेयर हिस्सा हर वर्ष उजड़ रहा है। इसके कारण विश्व में पाई जाने वाली लगभग ढाई लाख वनस्पति प्रजातियों में से 5 हजार से भी अधिक प्रजातियां नष्ट हो गई हैं। लगभग 25 हजार वनस्पति की प्रजातियां तेजी से विनाश की ओर बढ़ रही हैं। साथ ही 15 हजार प्रजातियों को प्रदूषण का खतरा उत्पन्न हो गया है। इसी प्रकार आज अनेकों जीव–जंतुओं की प्रजातियां भी प्रभावित हो रही हैं। बढ़ते प्रदूषण से पृथ्वी के तापमान में भी निरंतर वृद्धि हो रही है। यदि इसी प्रकार इसमें वृद्धि होती रही तो ध्रुवों पर सदियों से जमे विशाल हिमखंड पिघलने लगेंगे और इससे समुद्रों का जल स्तर बढ़ जाने से तटीय क्षेत्रों के देश अथवा उनके अधिकांश भूभाग जलमग्न हो जाएंगे। इस प्रकार के अनेकानेक कुप्रभाव जैसे सामान्य से अधिक गर्मी, सर्दी अथवा वर्षा, सूखा, बाढ़, समुद्री चक्रवात, बादल फटने की घटनाएं, भूकंप आदि की घटनाओं में अप्रत्याशित वृद्धि होना स्वाभाविक है।

जल प्रदूषण के संबंध में यदि गहराई से विचार करें तो पाते हैं कि जल में आवश्यकता से अधिक खनिज लवणों, कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थों, कारखानों से निकलने वाले रासायनिक पदार्थों तथा जलीय क्षेत्रों में विसर्जित किए जाने वाले मृत जीव–जंतुओं एवं कूड़ा–करकट से दूषित होना जल प्रदूषण कहलाता है। आमतौर पर जल प्रदूषण दो प्रकार का होता है। पहले प्रकार के प्रदूषण में गंदगी आंखों से दिखाई देती है। दूसरे प्रकार में जल में विषैले तत्व मौजूद रहते हैं लेकिन वे दिखाई नहीं देते। जल प्रदूषण मुख्य रूप से जनसंख्या में लगातार वृद्धि होने एवं अनियोजित एवं अनियंत्रित औद्योगीकरण से बढ़ रहा है। घरेलू व्यर्थ और मलमूत्र आदि के

नदियों में सीधे बहाए जाने, कीटनाशकों एवं उर्वरकों के अत्याधिक प्रयोग, अनेकों कारखानों से निकलने वाले रासायनिक पदार्थ, नदियों और तालाबों के किनारे मलमूत्र, मृतकों तथा अधजले शवों को नदियों में बहाने आदि कारणों से जलस्रोत बुरी तरह प्रदूषित हो रहे हैं। प्रदूषित जल के उपयोग से अनेकानेक बीमारियां जैसे–हैजा, पेचिश, पीलिया आदि महामारियां बढ़ रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार प्रदूषित जल के सेवन से प्रतिवर्ष डेढ़ करोड़ व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती है तथा प्रतिवर्ष पांच लाख बच्चे मौत के मुंह में पहुंच जाते हैं। अतः इस ओर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

भूमि प्रदूषण के संबंध में जानने से पूर्व आवश्यकता है कि भूमि या मृदा की संरचना पर गौर किया जाए। वास्तव में मृदा में विभिन्न प्रकार के लवण, खनिज तत्व, कार्बनिक पदार्थ, गैसें एवं जल एक निश्चित अनुपात में होते हैं। जब उसमें किंहीं कारणों से इन पदार्थों की मात्रा का अनुपात गड़बड़ा जाता है और उसमें कुछ विषैले और अवांछनीय तत्व मिल जाते हैं तो उसे भूमि प्रदूषण अथवा मृदा प्रदूषण कहा जाता है। भूमि अच्छी मृदा के प्रदूषित हो जाने से अथवा उसमें विषैले पदार्थों के मिश्रित हो जाने से मृदा विषाक्त तथा अनुपजाऊ हो जाती है अर्थात उसकी उत्पादन क्षमता पर कुप्रभाव पड़ता है, इसमें से विषाक्त पदार्थ जमीन के अंदर पानी में मिलकर उसे विषैला बना देते हैं तथा प्रदूषित मिट्टी में उगाई जाने वाली फसलों में विषैले तत्व आ जाते हैं और इनके उपयोग से मनुष्य तथा पशुओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है, वे अनेकानेक त्वचा रोग व टी.बी., कैंसर जैसे भयानक रोगों से ग्रसित हो सकते हैं। भूमि प्रदूषण कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए रासायनिक उर्वरकों तथा कीटनाशकों आदि के अनियंत्रित या अनियोजित मात्रा में प्रयोग करने तथा विभिन्न उद्योगों से निकलने वाले कूड़े–कचरे, ताप विद्युत ग्रहों की राख अवशिष्ट पदार्थों, रासायनिक तत्वों तथा विषैले अवयवों को बिना उपचारित किए छोड़ देने से सबसे अधिक हो रहा है। इनके अतिरिक्त भूमि प्रदूषण प्लास्टिक के थैले, कांच के डिब्बे, राख आदि कूड़े–करकट, मलमूत्र तथा मृत जीवों जैसे अनेक पदार्थों के खुले में फेंके जाने से भी बढ़ रहा है। यदि इसका उचित प्रबंध नहीं किया गया तो निकट भविष्य में हमें और हमारी पीढ़ियों को इनके गंभीर परिणाम भुगतने होंगे।

ध्वनि प्रदूषण से तात्पर्य हमारी आवश्यकता अथवा सहनीय मात्रा से अधिक होने वाली तीव्र आवाज अथवा होने वाले शोर से होता है जो हमारी श्रवण इंद्रियों के साथ–साथ हमारे शरीर के कई महत्वपूर्ण अंगों पर कुप्रभाव डालता है। आमतौर पर वायु एवं जल प्रदूषण का प्रभाव तो हमें स्पष्ट दिखाई देता है लेकिन ध्वनि प्रदूषण का इतना अधिक प्रभाव स्पष्ट नहीं दिखाई देता। अतः यह वायु और जल प्रदूषण की तुलना में अधिक खतरनाक माना

जाता है। शोर या ध्वनि की तीव्रता तरंगो के कंपन के आयाम पर निर्भर करती है। ध्वनि कंपन के मापने की इकाई को ***डेसीबल*** कहते हैं। इसे ***वायस मीटर*** नामक यंत्र से मापा जा सकता है। जहां से आवाज सुनाई पड़नी शुरू होती है उसके ठीक पहले की स्थिति शून्य डैसीबल, सामान्य बातचीत से 40 डैसीबल, रेडियो, संगीत तथा टेलीफोन की घंटी से 70 डैसीबल, पुलिस की सीटी से 80 डैसीबल, ट्रक या बस से 90 डैसीबल तथा विमानों को शोर 100 डैसीबल, बादल की गरज 110 डैसीबल तथा जैट विमान का शोर 130 डैसीबल तक होता है। सोते हुए व्यक्ति को जगाने के लिए 50 डैसीबल का शोर पर्याप्त होता है। आमतौर पर 30 से 40 डैसीबल तक का शोर हमारे लिए सहनीय माना गया है। इससे अधिक होने पर हमें बहरापन, हृदय संबंधी विकास, चिड़चिड़ापन, अनिद्रा, रक्तचाप जैसी अनेक बीमारियां हो जाती हैं। वर्तमान में शहरों के साथ–साथ गावों में वाहनों के बढ़ते प्रयोग, टी.वी., रेडियो और लाउडस्पीकर्स का तेज आवाज में चलाया जाना, आतिशबाजी का प्रयोग, हो–हल्ला आदि से ध्वनि प्रदूषण की समस्या ने अपना ताना–बाना शुरू कर दिया है जिस पर अभी से ही ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

प्रदूषण की समस्या मनुष्य के भौतिकवादी दृष्टिकोण, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की निरंतर प्रगति, बढ़ता औद्योगीकरण और शहरीकरण, मोटर वाहनों की बढ़ती संख्या, वनों का सफाया, जनसंख्या में हो रही बेतहाशा वृद्धि, गरीबी और अशिक्षा आदि के कारण अति विकराल होती चली जा रही है जिससे वनस्पतियों, जीव–जंतुओं और यहां तक कि स्वयं मनुष्य का जीवन भी संकटग्रस्त होता चला जा रहा है। यद्यपि प्रदूषण की समस्या अभी बड़े शहरों तक ही अधिक विकराल है लेकिन वह दिन दूर नहीं जब हमारे गांव भी बुरी तरह इसके जाल में फंस जाएंगे। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में यदि भी से कुछ सावधानियां बरती जाएं तो निश्चित ही विभिन्न प्रकारों के प्रदूषण के प्रकोप कम करने में सहायता मिल सकती है जैसे –

- वर्तमान में प्लास्टिक के बैग्स, लिफाफे और पाउचों आदि का इस्तेमाल बहुत तेजी से बढ़ रहा है। इनके कारण पाइप, नालियां आदि रुक जाती हैं। खेतों में अथवा कूड़े एवं खाद के ढेरों में दब जाने पर भी ये गल नहीं पाते तथा मिट्टी को प्रदूषित करते हैं। अतः यथा संभव इनका कम से कम उपयोग किया जाना चाहिए और इसके लिए जागरूकता उत्पन्न करने के लिए पंचायतों, स्वयंसेवी संगठनों और सरकारी प्रचार माध्यमों को तेजी से प्रयास करने चाहिए।
- कुओं, तालाबों, नदियों आदि को दूषित होने से बचाने के लिए सभी स्तरों से समुचित प्रयास किए जाने चाहिए। गांव के आस–पास नदियों अथवा तालाबों में अधजले शव बहाने से, पशुओं को उनमें नहलाने से उनका जल प्रदूषित हो जाता है। अतः जन जागरण अभियान चलाए जाने चाहिए।
- घरों/गांवों से निकलने वाले दूषित जल, मलमूत्र आदि को नालियों अथवा पाइपों के माध्यम से नदियों और तालाबों में सीधे डालने से वे प्रदूषित हो जाते हैं और उनके जल को गांववासियों अथवा पशुओं के प्रयोग किए जाने पर बीमारियों को बढ़ावा मिलता है। अतः इस प्रकार की गंदगी को सीधे नदियों और तालाबों में नहीं डाला जाना चाहिए।
- कुओं के पानी को जल प्रदूषण से बचाने के लिए उसमें कूड़ा–करकट नहीं पहुंचे, ऐसा प्रबंध किया जाना चाहिए। माह में एक बार और विशेष रूप से वर्षा ऋतु में उसमें पोटेशियम परमेग्नेट अथवा ब्लीचिंग पाउडर डालने से कुएं के पानी को शुद्ध रखा जा सकता है।
- घरों से निकलने वाले पानी को गलियों/सड़कों पर फैलने के लिए नहीं छोड़ना चाहिए। यथा संभव उसे गांव के बाहर निकालने हेतु प्रयास किया जाना चाहिए। वैसे इसके लिए सबसे उपयुक्त उपाय यह है कि प्रत्येक घर में पानी के निस्तारण हेतु सोकपिट बनवाया जाना चाहिए।
- मृत पशुओं के शव आदि गांव के आस–पास नहीं डालने चाहिए बल्कि गांव से अत्यधिक दूर डालने की व्यवस्था की जानी चाहिए अन्यथा इनके सड़ने से फैलने वाली दुर्गंध से गांवों में बीमारियां फैल सकती हैं।
- आटा चक्की, अन्य छोटे एवं घरेलू उद्योगों में काम आने वाली मशीनें, जो विशेष रूप से अधिक आवाज करती हैं को रिहायशी क्षेत्रों से दूर लगाई जानी चाहिए अन्यथा इनसे निकलने वाली तेज आवाज से ध्वनि प्रदूषण होगा जो संबंधित लोगों को अत्यधिक प्रभावित करेगा।
- त्योहारों, उत्सवों, पूजा–पाठ में अधिक शोर करने वाले लाउडस्पीकरों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। इससे ध्वनि प्रदूषण को बढ़ावा मिलता है।
- उत्सवों एवं त्योहार आदि पर विशेष रूप से अधिक आवाज करने वाली आतिशबाजी का तो बिल्कुल ही प्रयोग नहीं करना चाहिए। पटाखों की तेज आवाज से लोग बहरे तक हो सकते हैं। यद्यपि किसी भी प्रकार की आतिशबाजी ध्वनि एवं वायु प्रदूषण दोनों का कारण बनती हैं।
- रेडियो, टी.वी., रिकार्ड प्लेयर्स आदि को तेज आवाज में नहीं बजाना चाहिए। मोटर साइकिल, ट्रेक्टर आदि में तेज आवाज करने वाले हार्न नहीं लगवाने चाहिए। इनमें ध्वनि प्रदूषण अधिक होता है।
- घरों में खाना पकाने के लिए प्रयोग किए जाने वाले साधारण चूल्हे के स्थान पर धुआं रहित चूल्हा प्रयोग करना उपयोगी है। ये काफी सस्ता भी होता है और इसके साथ–साथ इसे सरकार द्वारा रियायती दरों पर उपलब्ध भी कराया जाता है। इसको प्राप्त करने के लिए ग्राम पंचायत विकास अधिकारी से संपर्क करना चाहिए।
- खाना पकाने में गोबर के कंडों का प्रयोग काफी प्रदूषणकारी होता है। इनके जलाने से कई हानिकारक गैसें निकलती हैं। आज–कल छोटे गोबर गैस संयंत्रों को गांवों मे बनवाया जा सकता है। इन पर सरकारी अनुदान उपलब्ध होने के कारण ये काफी कम कीमत में बनकर तैयार हो जाते हैं। इनसे खाना पकाने के लिए गैस के साथ–साथ खेतों के लिए कंपोस्ट खाद तथा रोशनी के लिए सुविधा भी स्वतः उपलब्ध हो जाती है।
- गांवों में उपयोग किए जाने वाले ट्रेक्टर्स, मोटर साइकिल, स्कूटर, डीजल पंप आदि

को समय–समय पर चेक कराना चाहिए जिससे उनसे निकलने वाले धुएं की मात्रा और आवाज को कम रखा जा सके। इससे डीजल/पेट्रोल की बचत करने के साथ–साथ वायु एवं ध्वनि प्रदूषण को भी कम किया जा सकता है।

- गांव के आस–पास खुले में शौचादि करने की प्रवृत्ति को रोका जाना चाहिए। यह अविकिसित और असभ्य होने की निशानी भी है और इससे वायु प्रदूषण भी होता है। वर्तमान मे कम खर्च स्वच्छ शौचालय बनवाए जा सकते हैं। इसके लिए सरकार द्वारा अनुदान भी दिया जाता है। इस संबंध में अधिक जानकारी प्राप्त करने हेतु ग्राम पंचायत विकास अधिकारी से संपर्क किया जा सकता है।
- पैदावार बढ़ाने की दृष्टि से खेतों में उपयोग किए जाने वाले खाद्य और कीटनाशकों का निर्धारित मात्रा के अनुसार ही उपयोग किया जाना चाहिए। इसके अत्यधिक प्रयोग से मिट्टी तो प्रदूषित होती ही है, इसके अतिरिक्त इससे पैदा होने वाले खाद्यान्न, फल, सब्जियां आदि भी प्रदूषित हो जाती हैं जिनके उपयोग से लोगों को कैंसर, श्वास रोग, अल्सर, त्वचा रोग जैसी भयंकर बीमारियां हो सकती हैं।
- अन्न भंडारण के समय उसे खराब होने से बचाने के लिए निर्धारित मात्रा में उपयुक्त प्रकार के कीटनाशकों का उपयोग किया जाना चाहिए अन्यथा अन्न प्रदूषित हो जाता है जिसके प्रयोग से अनेकानेक बीमारियां हो सकती हैं।
- सभी लोगों को अपने घरों के आस–पास कूड़ा–करकट और गंदगी नहीं फैलानी चाहिए। घरों के कूड़े–करकट को घरों के सामने या सड़कों पर न डालकर उपयुक्त स्थान पर डालने की व्यवस्था की जानी चाहिए।
- प्रदूषण की रोकथाम में वृक्ष विशेष रूप से सहायक होते हैं। अतः अधिक से अधिक वृक्ष लगाने का प्रयास होना चाहिए तथा वृक्षों की सुरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। कानून की सीमा से भी बाहर आने वाले हरे–भरे वृक्षों को भी नहीं काटा जाना चाहिए। 'अखिल भारतीय विज्ञान कांग्रेस' के द्वारा एक वृक्ष से उसकी औसत 50 वर्ष की आयु में आक्सीजन, प्रोटीन, वायु शुद्धीकरण, भूमि सुरक्षा, छाया, जलवायु के नियमितीकरण के रूप से लगभग 16 लाख रुपये मूल्य के लाभ प्राप्त होते हैं।
- जहां तक संभव हो धूम्रपान की आदत से बचना चाहिए। वैसे भी सार्वजनिक स्थानों पर इसके उपयोग पर सरकार द्वारा कानूनी प्रतिबंध लगा दिया गया है। सार्वजनिक स्थानों के अतिरिक्त अपने परिवार के सदस्यों तथा किंहीं दूसरे लोगों के समक्ष धम्रपान नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे धूम्रपान न करने वाले व्यक्ति को भी धूम्रपान करने वाले व्यक्ति से निकलने वाले धुएं से उसे 30 प्रतिशत हानि होती है चूंकि सांस के सहारे बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू का धुआं धूम्रपान नहीं करने वाले व्यक्ति के शरीर में भी प्रवेश कर जाता है।
- वायु, भूमि, जल एवं ध्वनि आदि के प्रदूषण से रोकथाम के उपायों को यथासंभव अधिक से अधिक लोगों को अवगत कराने का प्रयास किया जाना चाहिए और इसे कम करने के लिए तथा लोगों में इसके बारे में जागरूकता उत्पन्न करने के लिए सरकारी एजेंसियों के साथ–साथ प्रचार माध्यमों, सामाजिक कार्यकर्ताओं एवं सामाजिक संस्थाओं तथा पंचायतीराज संस्थाओं द्वारा यथासंभव सहयोग प्रदान किया जाना चाहिए।

इस प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में यदि उक्त सावधानियां बरतने के लिए लोगों को जागरूक किया जा सके तो वहां वायु, जल, ध्वनि एवं भूमि प्रदूषण को काफी हद तक रोका जा सकता है। यह सत्य है कि अभी तक ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों की भांति प्रदूषण की समस्या उत्पन्न नहीं हुई है लेकिन जिस अनियंत्रित एवं अनियोजित प्रकार से गांवों का विकास हो रहा है और वहां शहरों जैसी चकाचौंध को फैलाने के लिए जो सरकारी, संस्थागत एवं वैयक्तिक प्रयास हो रहे हैं, उनसे ऐसा आभास हो रहा है कि अब गांव भी अतिशीघ्र प्रदूषण की भंयकर बीमारी से ग्रसित हो जाएंगे। अतः यह आवश्यक है कि अब सरकारी एवं संस्थागत प्रयासों के साथ–साथ पंचायतीराज संस्थाओं और गैर–सरकारी संस्थाओं के द्वारा सामूहिक रूप से तथा समाज सेवियों द्वारा वैयक्तिक रूप से इस दिशा में कारगर प्रयत्न किए जाने चाहिए। इस संबंध में प्रत्येक स्तर से सभी लोगों को शिक्षित किए जाने हेतु जन जागरण, जन सहयोग, जन चेतना और जन सहभागिता को विकसित किया जाना भी आवश्यक है। इससे गांवों को निकट भविष्य में संभावित प्रदूषण की विभीषिका से कुछ हद तक बचाना संभव हो सकेगा। ❑

(लेखिका स्नातकोत्तर अर्थशास्त्र विभाग, हिंदू कालेज, मुरादाबाद (उ.प्र.), में वरिष्ठ प्रवक्ता हैं।)

पर्यावरण प्रदूषण : कारण और निवारण

डा. नरेंद्र पाल सिंह, नवनीत कुमार राजपूत

आज हम जिस वातावरण और परिवेश से चारों ओर से घिरे हुए हैं उसे पर्यावरण कहते हैं और प्रतिदिन हम जिन समस्त जैव–जीवों के साथ किसी भी प्रकार की पारस्परिक क्रिया करते हैं वे हमारे पर्यावरण का एक अंग है। पर्यावरण मानव को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से घेरे हुए है। मानव चारों ओर से प्राकृतिक दशाएं जैसे– वायु, जल, तापमान, मौसम, भूमि की बनावट, वन खनिज पदार्थ आदि तथा सामाजिक दशाएं जैसे सामाजिक ढांचा, सामाजिक संस्थाएं, सामाजिक समूह और सामाजिक मान्यताएं आदि से जुड़ा हुआ है क्योंकि मानव को इन सब दशाओं की कदम–कदम पर आवश्यकता पड़ती है। जब प्राकृतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक तीनों दशाएं पूर्ण रूप से समन्वित होकर मानव को घेरती हैं तो यह घिराव ही पर्यावरण का रूप ले लेता है। पर्यावरण का एक और भी घटक है जो मौसम संबंधी घटकों से बना है जैसे– सौर प्रकाश की मात्रा, ताप, वर्षा, आर्द्रता तथा पवन वेग आदि अतः हमारा पर्यावरण वह भौतिक एवं जैव सार है जिसमें हम रहते हैं।

आज का मानव प्रकृति के संतुलन में हस्तक्षेप, भौतिकतावाद एवं विकासात्मक क्रियाएं कर उसके संतुलन को बिगाड़ रहा है। प्रकृति ने अपनी ओर से अपने सभी संघटकों को सही संतुलन प्रदान किया है लेकिन मानव प्रकृति को छेड़कर उसकी मूल व्यवस्था में कठिनाई उत्पन्न कर देता है इसके कारण पर्यावरण की दशा निरंतर बिगड़ रही है जो कि मानव के लिए ही नहीं अपितु समस्त प्राणियों एवं पेड़–पौधों के लिए हानिकारक सिद्ध हो रही है। प्रदूषण वायु, जल तथा स्थल की भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं में होने वाला अवांछनीय परिवर्तन है जो कि प्रकृति में असंतुलन पैदा कर रहा है। आज प्रदूषण पृथ्वी के संपूर्ण पर्यावरण को दीमक की तरह खा रहा है। पर्यावरण के

कारण पृथ्वी पर जो जीव–जंतु तथा वनस्पति विकसित होते हैं, प्रदूषण उनको समय से पूर्व ही नष्ट कर देता है। प्रदूषण एक ऐसा हानिकारक तत्व है जो मनुष्य के शरीर एवं जीवन को सीधा–सीधा प्रभावित करता है। जल, थल और वायु के भौतिक, रासायनिक अथवा जैव लक्षणों के अनिश्चित तथा अवांछित परिवर्तनों को प्रदूषण की श्रेणी में शामिल करते हैं। वातावरण में प्रदूषण फैलाने के लिए जो घटक जिम्मेदार हैं उनमें गैसें जैसे–कार्बन मोनो–आक्साइड, सल्फर डाई आक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, नाइट्रोजन के आक्साइड आदि, हवा में धूल और कज्जल आदि, सल्फ्यूरिक अम्ल, नाइट्रिक अम्ल, क्रोमियम, लैड, जिंक, मरकरी, निकिल, आयरन, कृषि कीटनाशी रसायन, ओजोन, एथिलीन, यूरेनियम तथा प्लूटोनियम आदि शामिल हैं। इनसे भू–प्रदूषण, जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण तथा रेडियोएक्टिव प्रदूषण वातावरण में फैल जाता है।

पर्यावरण प्रदूषण के रूप

प्रारंभ से ही हमारे वातावरण में दूषित करने वाले तत्वों का समावेश रहा है किंतु मानव ने जैसे–जैसे भौतिकवाद एवं सुख सुविधाओं की ओर कदम बढ़ाये हैं तभी से इन तत्वों की मात्रा में और तेजी से वृद्धि हुई है। विकसित देशों द्वारा नये–नये आविष्कारों एवं तकनीकों को विकसित किया गया है जबकि इनसे उत्पन्न पर्यावरण के उत्फल सभी देशों को भुगतने पड़ रहे हैं। भारत भी इनसे अछूता नहीं रहा है। आजादी के बाद से ही औद्योगिकरण एवं शहरीकरण के कारण पर्यावरण की समस्या गंभीर रूप धारण करती जा रही है। शहरों में घर का कूड़ा–कचरा नगरपालिका द्वारा शहर के बाहर खुले स्थान पर डालने से गंदगी फैलती है जो कि स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक है। नदियों के किनारे बसे शहरों और कस्बों का मल, औद्योगिक कचरा एवं रासायनिक तत्व नदियों में डालने से उनका पानी भी दूषित हो रहा है और कुछ नदियों का पानी तो यहां तक दूषित पाया गया है कि पीने की बात तो दूर वह सिंचाई के योग्य भी नहीं है। प्रदूषण को फैलाने में कृषि अपशिष्ट भी कम भूमिका नहीं

निभा रहे हैं। यदि हम चीनी मिलों की ही बात तो उनसे निकला हुआ अपशिष्ट–शीरा, खोई तथा मैली को यदि हम सही तरीके से तुरंत उपयोग में नहीं लाते तो इनसे सारा वातावरण दूषित हो जाता है। अधिक उत्पादन की होड़ में हम अपने खेतों में विभिन्न प्रकार की खादों एवं कीटनाशकों का प्रयोग करके भी प्रदूषण को बढ़ावा दे रहे हैं। जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ हमें कृषि भूमि की भी आवश्यकता होती है जिसके लिए हम लगातार पेड़–पौधों एवं जंगलों को काटने से परहेज नहीं करते हैं जिसका परिणाम भविष्य में बहुत ही भयावह होगा।

भूमि प्रदूषण के साथ–साथ जल प्रदूषण भी समान रूप से हानिकारक एवं चिंताजनक है। जल प्रदूषण के अंतर्गत घरेलू अपमार्जक जैसे – बर्तन मांजने वाले पाउडरों में उपस्थित अनेक प्रकार के रसायन एवं वाहित मल, कारखानों से निकलने वाले जहरीले पानी में उपस्थित अनेक रासायनिक पदार्थ, नदियों एवं नहरों में स्वयं अथवा पशुओं को स्नान कराने, कपड़े अथवा बर्तन धोने, साबुन, राख, पके हुए खाने के बचे हुए टुकड़े फेंकने, नालियों का मल जल में विसर्जित करने, उद्योगों का रासायनिक अपशिष्ट पानी में छोड़ने, लाशों एवं अधजले शवों को नदियों में बहाने से जल दूषित हो जाता है। हमारे देश की अधिकांश नदियां मनुष्य की उपरोक्त गतिविधियों के कारण प्रदूषित हो गई हैं।

जिस वातावरण में हम सांस लेते हैं वह भी आज प्रदूषित हो गया है। आंधी तूफान के समय उड़ती धूल, वनों में लगी आग से उत्पन्न धुआं, ज्वालामुखी से निकली राख आदि वायु प्रदूषण के प्राकृतिक स्रोत हैं। मानव द्वारा स्वयं भी अनेक प्रकार की गैसें, सीसा तथा अन्य हानिकारक पदार्थ वायु में छोड़ने से वायु प्रदूषण फैलाया जाता है इनमें कारखानों एवं मोटर वाहनों से निकलने वाले धुएं में मौजूद विषैली गैसों से तरह–तरह के रोग फैल रहे हैं। दिल्ली, मुम्बई कोलकाता, चेन्नई, कानपुर, अहमदाबाद तथा सूरत आदि बड़े शहरों में औद्योगीकरण, शहरीकरण तथा स्वचालित मशीनों के कारण वायुमण्डल का लगभग 60 प्रतिशत भाग प्रदूषण की चपेट में रहता है। वायुमण्डल में कुछ हानिकारक तत्व मिल जाते हैं जो मनुष्य, जीव–जंतुओं और वनस्पति जगत के लिए हानिकारक हैं। हमारे वायुमण्डल में 78 प्रतिशत नाइट्रोजन, 21 प्रतिशत ऑक्सीजन, 0.03 प्रतिशत कार्बन डाई ऑक्साइड, नाइट्रोजन के विभिन्न आक्साइड तथा सस्पेंडेड पर्टिकुलेट मैटर की अधिकता हो जाने के कारण वायु प्रदूषित हो जाती है जो कि कोयला, लकड़ी, डीजल, पैट्रोल आदि ईंधन को जलाने से, मोटर वाहनों और कल–कारखानों से निकलने वाले धुएं आदि से उत्पन्न होकर वायु को दूषित कर देती है।

कभी–कभी आवश्यकता से अधिक अथवा असहनीय मात्रा से अधिक शोर उत्पन्न होता है तो वह ध्वनि प्रदूषण कहलाता है। ध्वनि प्रदूषण एक ऐसा प्रदूषण है जिसका प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं देता लेकिन फिर भी वह वायु तथा जल प्रदूषण से भी अधिक खतरनाक होता है। ध्वनि की तीव्रता तरंगों के कंपन के आयाम पर निर्भर करती है। ध्वनि प्रदूषण को मापने की इकाई डेसीबल कहलाती है जिसको 'वायस मीटर' नामक यंत्र से मापा जा सकता है। मनुष्य को जहां से आवाज सुनाई पड़नी शुरू होती है उससे ठीक पहले की स्थिति 0 डेसीबल कहलाती है। सांस की आवाज से 10 डेसीबल, रेडियो तथा टेलीफोन की घंटी से 70 डेसीबल, पुलिस की सीटी से 80 डेसीबल, ट्रक या बस से 90 डेसीबल, विमानों का शोर 100 डेसीबल, बादल की गरज से 110 डेसीबल तथा जेट विमान का शोर 130 डेसीबल के आसपास होता है। जैसे–जैसे नये–नये आविष्कार हो रहे हैं उसी के अनुरूप ध्वनि प्रदूषण भी वातावरण में फैल रहा है। मनुष्य शून्य डेसीबल की तीव्रता पर सुन सकता है। 25 डेसीबल तक शांति का वातावरण होता है और 90 डेसीबल का शोर मनुष्य के लिए हानिकारक और बेचैनी उत्पन्न कर देता है। ध्वनि प्रदूषण भी उद्योग धंधे, भारी मशीनें, परिवहन के साधन, मनोरंजन के साधन, सामाजिक एवं धार्मिक क्रियाकलाप जैसे – दीवाली, शब्बेरात, विवाह–शादी आदि पर पटाखे छुड़ाना, चुनाव एवं हड़ताल आदि के समय लाउडस्पीकर का प्रयोग तथा रात्रि जागरण आदि के द्वारा फैलता है।

नाभिकीय प्रदूषण को रेडियोधर्मी प्रदूषण भी कहते हैं। इस प्रदूषण के अंतर्गत रेडियोधर्मी पदार्थों के परमाणु नाभिकों से अल्फा, बीटा तथा गामा किरणें निकलती हैं। ये किरणें जीवधारियों में गुणसूत्र तथा जीन संबंधी परिवर्तन कर देती हैं जिसके कारण इनके वास्तविक लक्षणों एवं संरचना में परिवर्तन हो जाता है। जब परमाणु बमों का परीक्षण, बिजली घरों के अपशिष्ट पदार्थों तथा परमाणु संयंत्रों में रिसाव उत्पन्न होता है तब यह प्रदूषण उत्पन्न होता है। इस प्रकार के प्रदूषण को सर्वप्रथम जापान में अनुभव किया गया था जब द्वितीय विश्वयुद्ध के समय सन् 1945 में अमेरिका द्वारा हिरोशिमा तथा नागासाकी पर परमाणु बम गिराये गये थे तब इसके कारण न केवल हजारों लोगों की मृत्यु हुई थी अपितु लाखों लोग इससे प्रभावित भी हुए थे। आज परमाणु बमों के परीक्षण तथा परमाणु बिजलीघर रेडियोधर्मी प्रदूषण के प्रमुख स्रोत हैं।

औद्योगिक इकाइयों द्वारा निकाले गये अपशिष्ट में धातुओं के टुकड़े भी प्रभावित हो जाते हैं जो जल में मिलकर जल को प्रदूषित करते हैं तथा कुछ धातुओं के टुकड़े वायु के साथ मिलकर वायु को प्रदूषित करते हैं। वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चला है कि पारा, सीसा और निकिल धातु अपशिष्ट के रूप में फेंके जाने से अनेक बीमारियां फैल रही हैं। इससे मानसिक रोग, चिड़चिड़ापन, तनाव तथा मनोवृत्तियां क्षीण हो जाती हैं और व्यक्ति धीरे–धीरे अपने स्वास्थ्य को खो देता है। बैटरी बनाने वाले उद्योगों में अधिकांश मौतें धातु प्रदूषण के कारण ही हो रही हैं।

मानव कृषि उत्पादन को बढ़ाने के चक्कर में दिन–प्रतिदिन फसलों पर जहरीली दवाईयों एवं पेस्टीसाइड्स का प्रयोग खरपतवार एवं कीटों को नष्ट करने के लिए कर रहा है। दवाईयों के पैकिंग पर लिखा होता है कि इसे छिड़कने के बाद 40 दिन तक खेत से घास अथवा उपज को प्रयोग में न लाया जाये जबकि कृषक खेत में शाम को इन दवाईयों का प्रयोग करते हैं और अगले दिन सब्जियों एवं फलों को तोड़कर मंडियों में पहुंचा देते हैं। अतः इस प्रकार एक औसत भारतीय के भोजन में 0.27 मिलीग्राम डी.डी.टी. पायी जाती है और वह खाद्यान्न एवं सब्जियों के माध्यम से लगभग 100 ग्राम जहर प्रतिवर्ष खा लेता है। इतने जहर का यदि एक बार सेवन कर लिया जाये तो मनुष्य की मौत हो सकती है किंतु धीरे–धीरे जहर शरीर में जाने से मनुष्य

की मौत तो नहीं हो पाती किंतु भयानक बीमारी की चपेट में अवश्य आ जाता है।

पर्यावरण प्रदूषण के प्रभाव

प्रत्येक मनुष्य अपनी सुख–समृद्धि चाहता है जबकि वह जिन चीजों में सुख मानता है उससे प्रकृति के साथ छेड़–छाड़ अवश्य हो जाती है। मानव जानबूझकर भी बार–बार प्रकृति के साथ गलतियां करता है और पर्यावरण को विनाश के कगार तक पहुंचाने में कोई कसर नहीं छोड़ता है। जब तक मानव की आवश्यकताएं सीमित थीं उनसे पर्यावरण प्रभावित नहीं था। विज्ञान के नये–नये आविष्कारों ने घरेलू एवं औद्योगिक उपकरणों को तो विकसित कर दिया है लेकिन उनसे उत्पन्न प्रदूषण नियंत्रण का रास्ता नहीं खोजा है। हमारी पृथ्वी पर प्रदूषण फैलने से अनेक प्रकार की बीमारियों के रोगाणुओं को पनपने का अवसर मिलता है जो अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बीमारी फैलाने में सहायक होते हैं। भू–प्रदूषण एवं मृदा–अपर्दन से बाढ़ तथा सूखे की संभावनायें सदा बनी रहती हैं और भूमि उपजाऊ नहीं रहती, तथा फसल का उत्पादन कम हो जाता है। भू–प्रदूषण के अनेक दूरगामी दुष्प्रभाव हैं जैसे–अनेक प्रकार की बीमारियों के रोगाणुओं को भूमि में पनपने का अवसर मिलता है तथा गंदगीपर अनेक प्रकार की कीट, मक्खियां आदि बैठकर अनेक रोगों को फैलाने में सहायक होते हैं।

वायु प्रदूषण से मानव के स्वास्थ्य पर अनेक हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं। प्रदूषित वायु से मनुष्य में दमा, श्वसनीशोध, गले का दर्द, निमोनिया जैसे श्वसन रोग होते हैं। वायु प्रदूषण का कुप्रभाव केवल मनुष्य पर ही नहीं बल्कि पेड़–पौधों तथा जंतुओं पर भी पड़ता है। वायु प्रदूषण के कारण फेफड़ों का कैंसर, फैल रही ओजोन के कारण मानव में नेत्रदाह, खांसी, छाती में जलन तथा त्वचा का कैंसर आदि रोग हो रहे हैं। अनेक प्रकार की गैसें वायु में मिलकर वायु को प्रदूषित कर देती हैं जो कि मनुष्य के लिए हानिकारक भी है जैसे–सल्फर डाई आक्साइड पानी में घुलकर सल्फ्यूरिक अम्ल बनाती है जो कि फेफड़ों के ऊतकों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है जिसके कारण मनुष्य को तीव्र खांसी का रोग हो जाता है। कार्बन मोनो आक्साइड का प्रभाव मनुष्य के मस्तिष्क पर भी पड़ता है जिससे मनुष्य की सोचने–विचारने की शक्ति कम हो जाती है। नाइट्रोजन के आक्साइड मनुष्य की रोग प्रतिरोधक शक्ति को कम कर देते हैं। ओजोन वायुमंडल में मिलकर आंखों के रोग, सीने में जलन, खांसी आदि रोगों को बढ़ाती है। वायु प्रदूषण से प्रतिवर्ष 2.6 करोड़ लोग प्रभावित होकर इलाज के लिए सरकारी अस्पतालों में भर्ती हो रहे हैं जिन पर सरकार को प्रतिवर्ष लगभग 160 करोड़ रुपये खर्च करना पड़ रहा है। आजकल होने वाले बच्चों में दो तिहाई बीमारियां प्रदूषण जनित हैं।

भू–प्रदूषण, वायु प्रदूषण के साथ–साथ ध्वनि प्रदूषण का कहर भी मानव पर पड़ रहा है क्योंकि ध्वनि प्रदूषण से मानव की कार्य करने की क्षमता कम हो जाती है। 90 डेसीबल से अधिक शोर से त्वचा में अचानक उत्तेजना उत्पन्न हो जाती है। लगातार शोर से नियमित सिर दर्द रहने लगता है, शरीर में बेचैनी, बहरापन, हृदय रोग, आंतों में अल्सर, उच्च रक्त दाब आदि रोग हो जाते हैं। अधिक तीव्र ध्वनि मानव की श्रवण शक्ति को कम करती है और नींद में कमी करती है जिससे नाड़ी संस्थान संबंधी तथा अनिद्रा आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं, यहां तक कि कभी–कभी आदमी पागल भी हो जाता है। तीव्र ध्वनि से केवल मानव ही प्रभावित नहीं होता बल्कि इससे कुछ पौधों की वृद्धि भी बाधित हो जाती है। कुछ ध्वनि छोटे–छोटे जीवाणुओं को नष्ट कर देती है। 120 डेसीबल की ध्वनि गर्भवती महिला और उसके गर्भस्थ शिशु के लिए हानिकारक होती है जिसके कारण महिला का स्वभाव चिडचिड़ा हो जाता है। ध्वनि, रक्त वाहिनियों में संकुचन उत्पन्न करती है जिससे रक्त प्रवाह में बाधा उत्पन्न होती है तथा रक्त चाप बढ़ता है जिसके कारण दिल का दौरा पड़ सकता है। 90–100 डेसीबल की ध्वनि पर हृदय की धड़कन बढ़ जाती है। अधिक लंबी अवधि तक तीव्र शोर के कारण बहरेपन का रोग हो जाता है, 90 डेसीबल से अधिक ध्वनि अंतः कर्ण को क्षति पहुंचाती है। 140 डेसीबल की ध्वनि कुछ सेकेंडों, तथा 150 डेसीबल की ध्वनि कुछ मिनटों के लिए अस्थायी बहरापन उत्पन्न करती है। 180–190 डेसीबल की ध्वनि स्थायी बहरापन उत्पन्न कर सकती है।

जल प्रदूषण, घरेलू अपमार्जक, वाहित मल तथा औद्योगिक अपशिष्ट के जल में मिल जाने से होता है। अनेक प्रकार के अवांछित अपशिष्ट पदार्थों के जल में मिलने, उसमें भौतिक, रासायनिक तथा जैविक परिवर्तन होने के कारण जल में रहने वाले पौधे तथा जंतु तो प्रभावित होते ही हैं, इसके पीने तथा अन्य प्रकार के प्रयोगों से मनुष्य भी प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। पेयजल में उपस्थित रासायनिक पदार्थों तथा जल के संपर्क द्वारा जल प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य प्रभावित होता है और वह अनेक रोगों से घिर जाता है। जलीय पादपों की अधिकता से जलाशयों में रात्रि में ऑक्सीजन की कमी हो जाती है जिससे छोटी–छोटी मछलियां तथा अन्य कीट मर जाते हैं। दूषित जल के सेवन से आंत्र रोग, पीलिया, हैजा, टायफाइड तथा अपच आदि रोग हो जाते हैं। तेलीय प्रदूषण के कारण मछलियों को उचित ऑक्सीजन नहीं मिलती और वे बड़ी संख्या में मरने लगती हैं। विषाणु, जीवाणु युक्त तथा नीले हरे शैवालों से युक्त प्रदूषित जल को पीने से पालतु पशुओं में अनेक रोग हो जाते हैं। पारे तथा सीसे के यौगिक जल, सूक्ष्म पौधों के माध्यम से मछलियों के शरीर में पहुंचते हैं तथा ऐसी मछलियों के सेवन से मनुष्यों के नेत्र एवं मस्तिष्क पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। प्रदूषित जल खेती योग्य जमीन को ऊसर बना देता है तथा जलाश्यों की तलहटी में एकत्रित हाइड्रोजन सल्फाइड गैस गंधक के अम्ल में बदल जाती है जिसके प्रभाव से जलीय जीवधारियों की मृत्यु हो जाती है। पीने के पानी में 100 मिली लीटर में केवल 100 कोलीफार्म जीवाणु हों तो उसे पीने योग्य माना जाता है लेकिन इंडोनेशिया, नाइजीरिया और कोलंबिया में पेयजल के नमूनों में 100 मिली लीटर पानी में 30 लाख कोलीफार्म जीवाणु पाये जाते हैं। विशेषज्ञों का मानना है कि आबादी इसी प्रकार बढ़ती रही तथा प्रदूषण की रफ्तार तेज होती रही एवं कृषि तथा उद्योगों ने यूं ही पानी सोखना जारी रखा तो पृथ्वी पर जल संकट और भी विकट हो जायेगा।

रेडियोधर्मी प्रदूषण से जीन तथा गुणसूत्रों में उत्परिवर्तन हो जाता है जिसके कारण अस्थि कैंसर तथा ऊतकों का विनाश होता है इससे रक्त कैंसर तथा अन्य अनुवांशिक रोग

उत्पन्न हो जाते हैं। गर्भाशय में शिशुओं की मृत्यु हो जाती है, विकलांग शिशु पैदा होते हैं। समुद्र में परमाणु विस्फोट के फलस्वरूप जलीय एवं स्थलीय जीवधारी प्रभावित होते हैं। इससे मनुष्य की प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो जाती है और तंत्रिका संबंधी विकार हो जाता है।

पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम

प्रदूषण से बचने के लिए न केवल सरकार को बल्कि समाजसेवी संस्थाओं तथा आम व्यक्तियों को भी प्रयास करने होंगे। पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागृति उत्पन्न करनी होगी, प्रदूषण की रोकथाम के लिए हमें समाज के साथ जुड़ना होगा तथा पर्यावरण नियंत्रण के कार्यक्रमों को चलाना होगा। इस क्षेत्र में सभी का योगदान महत्वपूर्ण हो सकता है। पर्यावरण संरक्षण के लिए चहुंमुखी प्रयास किये जाने की आवश्यकता है। हम सबका यह प्रयास होना चाहिए कि पर्यावरण को स्वच्छ व प्रदूषण मुक्त बनाने की दिशा में हम कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ें। यह तभी संभव हो सकता है यदि:

- औद्योगिक प्रदूषण पर रोकथाम के लिए लोगों को फैक्ट्री एक्ट की जानकारी दी जानी चाहिए जिससे लोग अपने–अपने नगर में आंदोलन चलाकर सरकार के सहयोग से उद्योगों में प्रदूषणरोधक संयंत्र अनिवार्य रूप से लगवा सकें।
- यातायात के साधनों से होने वाले प्रदूषण से बचने के लिए सभी अपने–अपने वाहनों में प्रदूषण नियंत्रक यंत्र लगवायें तथा छुट्टी के दिन सभी समाजसेवी मिलकर प्रदूषण नियंत्रण के बारे में सड़कों पर कैंप आयोजित कर वाहन चालकों को प्रदूषण संबंधी जानकारी प्रदान करें।
- प्रदूषण नियंत्रण के लिए लोगों को चाहिए कि वह अपने घरों तथा आसपास में कूड़े–कचरे के ढेर इकट्ठा न होने दें तथा गंदगी से उत्पन्न होने वाली बीमारियों के बारे में अपने मौहल्ले के लोगों को जानकारी दें।
- सार्वजनिक स्थानों पर गंदगी फैलाने वाले लोगों को सचेत करने हेतु जगह–जगह पर स्लोगन लिखें और व्यक्तिगत तौर पर संपर्क कर जानकारी प्रदान करें।
- पर्यावरण प्रदूषण पर नियंत्रण पाया जा सकता है यदि सभी अपना सहयोग दें। रेलवे स्टेशन, सिनेमाहाल, पार्क तथा इसी प्रकार के सार्वजनिक स्थानों पर लोगों को बतायें कि व्यर्थ पानी बहाना, रास्ते में कूड़ा–करकट फैंकना, थूकना, जोर–जोर से बातें करना, धूम्रपान एवं नशीले पदार्थों का सेवन करना आदि से प्रदूषण फैलता है, इसकी जानकारी प्रचारित एवं प्रसारित करें।
- सभी लोग मिलकर समाज को जागरूक कर सकते हैं यदि पर्यावरण के बारे में पूर्ण जानकारी लोगों में फैलायें और बतायें कि हर घर में एक हरा पेड़ अवश्य लगवायें तथा जंगलों में भी पेड़ काटने पर एक नया पेड़ अवश्य प्रत्यारोपित करें, स्कूलों, सड़कों, सब गलियों में भी जहां पेड़ लगाने की जगह हो छात्रों के माध्यम से पेड़ लगायें एवं उसकी परवरिश भी करें।
- छात्र, राष्ट्रीय सेवा योजना, राष्ट्रीय कैडेट कोर तथा स्काउट के माध्यम से भी समय–समय पर आयोजित होने वाले कैंपों तथा दैनिक गतिविधियों के माध्यम से समाज को पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण के बारे में जागरूक कर सकते हैं।
- समाज को, महानगरों, नगरों तथा छोटे कस्बों में सुलभ शौचालयों तथा मल उपचार संयंत्रों की स्थापना एवं इनके न होने से होने वाली हानियों के बारे में आगाह कर सकते हैं तथा बता सकते हैं कि विद्युत शवदाह गृहों की स्थापना की जाये ताकि अधजले शव व कार्बनिक पदार्थ नदियों में प्रवाहित न हों।
- अपशिष्ट पदार्थों को किसी एक स्थान पर एकत्रित किया जाये ताकि उनका चक्रीकरण करके उपयोगी पदार्थों में बदला जा सके एवं शेष को पूर्ण रूप से नष्ट किया जा सके।
- मकानों एवं निवास स्थानों के निर्माण पूर्व हवा एवं सूर्य के प्रकाश की पर्याप्त व्यवस्था को देखते हुए इन्हें सड़कों इत्यादि से दूर बनाया जाना चाहिए। ग्रामीण क्षेत्र में गोबर बाहर न डालकर उसका प्रयोग गोबर गैस संयंत्र में करना चाहिए।
- जहां वाहन अधिक चलते हैं वहां की सड़कें पक्की होनी चाहिए ताकि धूल हवा को दूषित न करे तथा सड़कों के किनारे–किनारे अधिक से अधिक मात्रा में वृक्ष लगाने चाहिए और उन्हें नष्ट होने से बचाना चाहिए क्योंकि वृक्ष वायु को शुद्ध करते हैं।
- औद्योगिक चिमनियों को अधिक ऊंचा बनाना चाहिए साथ ही निकलने वाले धुएं को कम करने के लिए विशेष छन्ने या फिल्टर का प्रयोग अनिवार्य हो तथा कारखानों को आबादी से दूर स्थापित करना चाहिए।
- वहित मल, घर से निकले हुए अपमार्जक, गंदे जल, कारखानों से निकलने वाले जहरीले अपशिष्ट पदार्थों एवं गर्म जल को नदियों या समुद्र में नहीं गिराना चाहिए। कूड़ा–करकट को जलाशयों में न डालकर शहर के बाहर किसी गड्ढे में डालकर मिट्टी से ढक देना चाहिए।
- कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उस खेत का जल बाहर पीने वाले जलाशयों में न जाये।
- प्रदूषण फैलाने वाले वाहनों की समय–समय पर जांच होनी चाहिए ताकि प्रदूषण को बढ़ावा न मिल सके। प्रदूषण नियंत्रण विभाग द्वारा लागू नियमों को सख्ती से लागू करना चाहिए।
- शोर करने वाले वाहनों को सड़क पर चलने से रोकना चाहिए तथा वाहनों में साइलेंसर को प्रयोग अनिवार्य हो। साथ ही तीव्र ध्वनि उत्पन्न करने वाले यंत्रों पर रोक लगा दी जानी चाहिए।
- उद्योगों में प्रयुक्त अनेक प्रकार की मशीनों के शोर को कम करने के लिए उन पर साइलेंसर आदि लगाये जाने चाहिए। नई मशीन शोर कम करती है अतः मशीनों का नवीनीकरण भी करते रहना चाहिए।
- भू–चित्रों के आधार पर अनुमान है कि हमारे देश में 7.5 करोड़ हैक्टेयर वन क्षेत्र है जबकि वास्तव में 6.4 करोड़ हैक्टेयर में वन है और सिर्फ 3.5 करोड़ हैक्टेयर भूमि ही घने जंगलों से ढकी हुई है। इस प्रकार यह क्षेत्रफल कुल क्षेत्रफल का मात्र 11 प्रतिशत ही है। अनुमान है कि 3.6 करोड़ हैक्टेयर भूमि पर जंगलों को साफ किया जा चुका है जो कि पर्यावरण प्रदूषण को फलीभूत कर रहा है। सरकार को चाहिए कि जनता के सहयोग से वनों के पुनरोत्थान

(शेष पृष्ठ 46 पर)

ADMISSION OPEN
15th November

लोक प्रशासन

(हिन्दी माध्यम)

By

Atul Lohiya

(A person who believes in hard work and scientific approach)

UGC-NET

QUALIFIED IN TWO SUBJECTS

HISTORY & PUB. ADMINISTRATION

Course Offered:
* Mains
* Mains + Prelims (Foundation Course)
* Test Series for Mains
* Answer Formating Session for Mains
* Test Series with Answer Formating Session
* Test Series for Prelims

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध
(पूर्णतः कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)
MAINS - 2500/-
MAINS + PRE. - 3500/-
डाक खर्च - 200/- अतिरिक्त
Send DD/MO in favour of Atul Lohiya

***UPSC** के साथ **UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS** की भी तैयारी*

NEW BATCH STARTS FROM 14th DEC. & 5th JAN., 2005

'अतुल लोहिया'

शिक्षक, मार्गदर्शक और मित्र भी
Cell.: 9810651005, 0532-3217608

Sanjay Singh
Regional Director (Allahabad)
Cell. : 9839746184

Shashi Bhushan
Director
Cell. : 9868378728

Our New Branch at Allahabad

"PRABHA"

AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION

FLAT No. 105, 1st FLOOR, VIRAT BHAWAN (MTNL BUILDING), NEAR BATRA CINEMA, DR. MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009 • Ph.: 27655134. Cell.: 9810651005

Branch : 305/250, COLONELGANJ, NEAR COLONELGANJ POLICE STATION, ALLAHABAD.

पर्यावरण-सुधार के लिए पर्यावरण कार्यदल

भारतीय सेना ने शिवालिक पहाड़ियों के एक विशाल क्षेत्र में बड़े पैमाने पर पेड़ लगाकर क्षय होती पारिस्थितिकी को पुनर्जीवित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इससे मसूरी में हिमपात को बहाल करने में मदद मिली है और इस क्षेत्र की पुरानी खूबसूरती फिर से लौट आई है।

पारिस्थितिकी निर्माण कार्य में सेना को लगाने का विचार 127 इंफेंट्री बटालियन (प्रादेशिक सेना) की पारिस्थितिकी यूनिट के रूप में साकार हुआ। यह यूनिट शिवालिक पहाड़ियों और गढ़वाल क्षेत्र के हिमालय पर्वतों के पर्यावरण और पारिस्थितिकी की रक्षा के प्रति समर्पित हैं 1982 में उत्तरांचल में लैंसडाऊन में स्थापित ***गढ़वाल राईफल्स रेजिमेंटल सैंटर*** दुनिया में अपने किस्म का पहला प्रयोग था।

यह यूनिट गढ़वाल राईफल्स के साथ प्रादेशिक सेना की यूनिट के रूप में जोड़ी गई थी और उत्तरांचल पहाड़ियों के भूतपूर्व सैनिकों को इस काम का जिम्मा सौंपा गया था। इस यूनिट को शिवालिक पहाड़ियों और गढ़वाल के हिमालय पहाड़ों की बिगड़ती पारिस्थितिकी को सुधारने का काम दिया गया था। इस काम के लिए इस यूनिट ने वन लगाने और मृदा संरक्षण तकनीकों का इस्तेमाल किया।

यह यूनिट रक्षा मंत्रालय, पर्यावरण तथा वन मंत्रालय और उत्तरांचल सरकार का एक साझा उपक्रम है। इसका शुरुआती खर्च रक्षा मंत्रालय उठाता है, जिसे बाद में पर्यावरण और वन मंत्रालय द्वारा पूरा कर दिया जाता है। राज्य के वन विभाग द्वारा इस परियोजना के लिए तकनीकी और दूसरी की सहायता उपलब्ध कराई जाती है।

शुरू में इस यूनिट को 1982 में मोहन्द के निकट शाहजहांपुर पहाड़ियों में वन लगाने का काम सौंपा गया था। वन लगाने के अलावा, यूनिट ने इस इलाके में मृदा संरक्षण का काम भी किया है। 1982 से 1984 तक की अवधि में इस यूनिट ने 700 हैक्टेयर क्षेत्र को कवर किया, जिस पर 3,18,000 पौध लगाई गईं।

1985 में ***127 इंफैंट्री बटालियन (टी.ए.) पारिस्थितिकी यूनिट*** को मसूरी के दक्षिणी हिस्सों में भेज दिया गया, क्योंकि अवैज्ञानिक उत्खनन और पेड़ काटे जाने की वजह से इस क्षेत्र की चमक और पुराना सौंदर्य नष्ट होने लगा था। इस यूनिट को खदानों के उपचार और उन्हें भरने, मृदा संरक्षण और वन लगाने का काम सौंपा गया। यह सारा काम ***क्यारकूली माइक्रो आवाह विकास योजना*** तहत किया गया। इस लंबे चौड़े कार्य में कटीले तारों की बाढ़ लगाना, गड्डों को भरना, गंदगी को इकट्ठा करना, घास के पौधे लगाना, खरपतवार की सफाई करना, पौधों की स्थानीय कटाई और सिंचाई का काम शामिल था और यह काम समुद्र तल से 5,000 से 6,000 फुट की ऊंचाई पर दुर्गम पहाड़ी इलाकों में किया गया।

सीमित संसाधनों और 200 भूतपूर्व सैनिकों की मदद से, यूनिट ने 1994 तक 27 लाख पेड़ लगा दिए थे और 26 खदानों को भर दिया था। इस प्रकार 3400 हैक्टेयर क्षेत्र की कायापलट की गई। यूनिट के प्रयास रंग लाए और 17 साल के अंतराल के बाद, 1997 के बाद मसूरी में पहली बार हिमपात हुआ। इतना ही नहीं, देहरादून में भी वर्षा की स्थिति में सुधार आया। जो काम 13 साल में पूरा होना था, उसे यूनिट ने 9 साल में पूरा कर दिया।

मसूरी में परियोजना को सफलतापूर्वक पूरा करने के बाद, इस यूनिट ने अगलार जलाशय के पारिस्थितिक पुनर्निर्माण का काम अपने हाथ में लिया। अगलार, यमुना नदी की एक प्रमुख सहायक नदी है। अगलार जलसंभर परियोजना नदी के उत्तर में और मसूरी पहाड़ी के उस पार वाले आवाह क्षेत्र में पड़ती है। लगातार पेड़ों की कटाई और चारा इकट्ठा करते रहने की वजह से ये पहाड़ी इलाके पूरी तरह से बंजर और वनस्पतिविहीन हो गए हैं। ये पहाड़ी इलाके, वर्षा से बचाव वाले ये क्षेत्र दक्षिणी ढलान पर पड़ते हैं इसलिए यहां बहुत कम वर्षा होती है। इस यूनिट ने इस चुनौतिपूर्ण काम को पूरे समर्पण और गंभीरता से लिया है। अब तक इस इकाई ने 4400 हैक्टेयर जमीन पर 35 लाख पौधे लगाए हैं। इस परियोजना को पूरा करने के लिए इकाई के पास 9 वर्ष का समय और है। अनुमान है कि शेष अवधि के दौरान मसूरी के पीछे की पहाड़ी के 4000 हैक्टेयर इलाके में 30 लाख पौधे लगा दिए जाएंगे।

इस पारिस्थितिकी कार्यबल द्वारा लगाए गए पौधों के जिंदा रहने की दर, किसी भी सरकारी/गैर-सरकारी एजेंसी की दर से कहीं अधिक है। वर्ष 2000-2001 के दौरान लगाए गए पौधों में से 75 प्रतिशत तक पौधे जिंदा रहे और सूखे के सालों में भी यह दर 70 प्रतिशत से नीचे नहीं गई है। लगाए गए पौधों की देखभाल और रक्षा एक निरंतर प्रक्रिया है जो 3 साल तक चलती है और पौधों के स्वस्थ वृक्षों में बदलने के लिए यह अवधि काफी होती है।

जन भागीदारी

पेड़ लगाने के अलावा, यह यूनिट अपने परियोजना क्षेत्र में जागरूकता पैदा करने के कार्यक्रम भी चला रही है, क्योंकि संरक्षण की रफ्तार को लंबे समय तक बनाए रखने के लिए यह जरूरी समझा जा रहा है। वृक्षों के सरंक्षण के लिए यूनिट को स्थानीय निवासियों का स्वैच्छिक और सहज सहयोग मिल रहा है। इलाके में रहने वाले लोगों को फलदार वृक्ष लगाने के लिए प्रेरित किया गया है। इसका नतीजा यह हुआ है कि कुछ गांवों के समूह बागों जैसे लगने लगे हैं। यहां के निवासी, जो अब तक खेती पर ही निर्भर रहा करते थे, उन्होंने इस इलाके में काम करने वाले पारिस्थितिकी बल के सदस्यों के कहने पर बागवानी को अपना लिया है। ❑

साभार : प्रेस सूचना कार्यालय

गांवों के कायाकल्प का संकल्प

वेद प्रकाश अरोड़ा

भारत आज विश्व में सर्वाधिक तेजी से प्रगति करने वाला तीसरा देश बन गया है और वह एक विकासशील देश के गलियारों को पार करता हुआ विकसित देश की दहलीज तक पहुंच गया है। इसका श्रेय उसके शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की तेज चाल, उद्योगों और कृषि तथा वैज्ञानिक और गैर वैज्ञानिक क्षेत्रों में नई–नई उपलब्धियों, योजनाकारों और क्रियान्वयनकर्ताओं के बीच सूझबूझभरे तालमेल, मजदूरों और किसानों के अथक योगदान तथा नेताओं–नायकों की दूरदर्शिता को जाता है। इस तथ्य को अधिकाधिक महसूस किया जाने लगा है। असली विकास वह होता है जो शहरों और गांवों सबको लेकर चले, सबके जीवन को प्रभावित करे, और सभी क्षेत्रों में गुलाबी रंग भरे, चहुमुखी और संपूर्ण विकास से ही देश का ग्राफ ऊंचा उठता है। दूसरे, ऊपर का ढांचा तभी मजबूती से टिका रह सकता है जब उसका बुनियादी ढांचा और स्वयं बुनियाद मजबूत हो। सशक्त और सुदृढ़ भारत के निर्माण के लिए उसकी नींव का मजबूत होना अपरिहार्य रूप से आवश्यक है। हमारे देश की नींव बनाती है हमारी कृषि और गांव, इन गांवों को बल प्रदान करती है पंचायतें, पंचायती राज संस्थाएं, साफ सुथरी पगडंडियां और संपर्क सड़कें, स्वजल धारा और हरियाली जैसे जल आपूर्ति कार्यक्रम, छत–छप्पर के नीचे आश्रय देने वाली इंदिरा आवास योजना, रोगों से दूर रखने वाला ग्रामीण सफाई कार्यक्रम भविष्य में आस्था जगाने वाली संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, निराशा के माहौल से उबारने वाली स्वर्ण जयंती ग्राम रोजगार योजना, सूखे को उसे भगा देने वाले क्षेत्र विकास कार्यक्रम प्रधानमंत्री ग्रामीण जल संवर्धन योजना तथा सबसे बढ़ कर काम के बदले अनाज कार्यक्रम इन विभिन्न शिलाओं को सलीके से लगाने, जोड़ने पर नींव के मजबूत होते ही ग्रामीण भारत के चेहरे पर चमक और निखार आ जाएगा। तब गांवों और शहरी के बीच की दूरी कम होने का प्रधानमंत्री का सपना सच होने लगेगा। सब साधन जुटने पर खेतों के उत्पादन और उत्पादकता में जबरदस्त उछाल आ जाएगा। किसानों के जीवन में बहार आ जाएगी और किसानी कर्म उबाने और थकाने वाला न रह कर अरमानों–उमंगों को पूरा करने वाला सार्थक व्यवसाय हो जाएगा तथा स्वयं ग्रामीण क्षेत्रों के विकास में ऊंच–नीच और असंतुलनों का पीड़ाकारी अध्याय सिमटता चला जाएगा। इसी ऊंच–नीच और असंतुलन को दूर किए जाने को प्राथमिकता देने के लिए और गरीबों की दशा में सुधार लाने की मानसिकता और संकल्प के साथ ग्रामीण विकास मंत्रालय विभिन्न योजनाओं को मूर्त रूप देने के लिए प्रयत्नशील है।

इन कार्यक्रमों में काम के बदले अनाज कार्यक्रम पर सबसे पहले विचार करना प्रासंगिक और सर्वधा उचित होगा, क्योंकि प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने 14 नवंबर 2004 को भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू की 11वीं जयंती और बाल दिवस पर आंध्र प्रदेश के रंगारेड्डी जिले के अलूर गांव से इस राष्ट्रीय कार्यक्रम का श्रीगणेश किया है। इससे पहले तीन नवंबर को नई दिल्ली में आयोजित पांचवें सामाजिक संपादक सम्मेलन में ग्रामीण विकास मंत्री डा. रघुवंश प्रसाद सिंह ने भी इस पर व्यापक प्रकाश डाला। यह कार्यक्रम गांवों में गरीबी दूर करने की दिशा में पिछली सरकार के कार्यक्रम से भी अधिक व्यापक होगा। यह कालांतर में यह कार्यक्रम गांवों के गरीब लोगें के लिए रोजगार गारंटी स्कीम में परिवर्तित कर दिया जाएगा। इसके लागू होने पर श्रमिकों की रोजगार की तलाश में शहरों की तरफ पलायन स्वतः रुक जाएगा। रोजगार गारंटी स्कीम को लागू करने के लिए जल्दी कानून बनाया जाएगा। इस में सभी गरीब लेकिन समर्थ व्यक्तियों को संपदा–सृजन के लिए लोक निर्माण कार्यों के क्रियान्वयन के वास्ते प्रत्येक वर्ष कम से कम एक सौ दिन रोजगार की कानूनी गारंटी दी जाएगी। यह रोजगार न्यूनतम मजदूरी पर मिलेगा। राष्ट्रीय रोजगार गारंटी अधिनियम जल्दी बनाने और लागू करने की प्रतिबद्धता संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन के 27 मई 2004 को जारी साझा–न्यूनतम कार्यक्रम में व्यक्त की गई है। जहां तक काम के बदले अनाज कार्यक्रम का संबंध है, केंद्र द्वारा प्रायोजित इस कार्यक्रम के लिए पूरा का पूरा धन केंद्र की ओर से दिया जाएगा। लेकिन राज्यों को परिवहन लागत, माल उतारने का खर्च तथा अनाज पर लगने वाले कर को देना होगा। इस सारे कार्यक्रम का संचालन राज्य सरकारें करेंगी। इसका लाभ शहरों और गांवों दोनों को मिलना एक बेजोड़ घटना होगी। इससे पहले संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना चल रही थी। इसीलिए पिछड़े जिलों की ओर अधिक ध्यान देने के लिए काम के बदले अनाज देने का राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम तैयार किया गया। गोवा को छोड़ अन्य सभी राज्यों में कम से कम एक जिले में यह कार्यक्रम लागू किया जाएगा। सबसे पहले इसकी शुरुआत सबसे पिछड़े 150 जिलों में की जाएगी और गरीबी की रेखा के नीचे जैसे–तैसे जीवन जी रहे परिवारों के एक–एक सदस्य को सौ दिन तक मजदूरी के रूप में पूरक रोजगार मिलेगा। ग्रामीण विकास मंत्रालय सामुदायिक परिसंपत्तियों का निर्माण किया जाएगा। इसमें जलसंग्रह, सूखे से छुटकारे, बाढ़ नियंत्रण, भूमि विकास और ग्रामीण संपर्क सड़कों जैसे कार्यों पर मुख्य रूप से ध्यान दिया जाएगा। निसंदेह इससे गरीबों के लिए रोजगार के नए अवसर पैदा होंगे और उनकी आय तथा क्रय शक्ति बढ़ जाएगी। प्रत्येक मजदूर को अपने पारिश्रमिक का एक चौथाई नकद और बाकी

तीन चौथाई अनाज के रूप में मिलेगा जो मोटेतौर पर पांच किलो प्रतिदिन के हिसाब से दिया जाएगा। यह अनाज गरीबी रेखा के नीचे के लोगों के लिए लागू सस्ती संस्थाएं, जानी–मानी गैर–सरकारी संस्थाएं लागू कराएंगी। बड़ा निगरानी तंत्र बनाया गया है जो यह सुनिश्चित करेगा कि सभी निर्माण कार्य प्रभावी तरीके से लागू हों तथा पूरी पारदर्शिता बरती जाए। वर्ष 2004–2005 के दौरान इस कार्यक्रम के लिए 2,020 करोड़ रुपये नकद और 20 लाख टन अनाज दिया जाएगा जो संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के आवंटन के अलावा होगा। पूरे वर्ष के लिए 5,400 करोड़ रुपये और 37 लाख टन अनाज की आवश्यकता होगी।

ग्रामीण विकास मंत्री ने संपादक सम्मेलन में कहा कि पुनरुत्थानशील और उदीयमान भारत के निर्माण के लिए लाभकारी रोजगार, खाद्य सुरक्षा और देहाती इलाकों में बुनियादी ढांचे का निर्माण अनिवार्य बन गए हैं। संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना इन्हीं लक्ष्यों को हासिल करने के लिए लागू की जा रही है। इस कार्यक्रम में विशाल खाद्य भंडार का समुचित प्रयोग करने के लिए ग्रामीण क्षेत्रों में विकास कार्यों के साथ समन्वय बिठाते हुए जन–जन की खाद्य सुरक्षा की व्यवस्था की जा रही है। इसमें प्रत्येक वर्ष 6,000 करोड़ रुपये नकद और 50 लाख टन अनाज दिया जाता है। इसका उद्देश्य टिकाऊ सामाजिक और आर्थिक बुनियादी ढांचे की स्थापना कर खाद्य सुरक्षा के साथ–साथ लगभग 100 करोड़ मानव दिवसों की व्यवस्था करना है। संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना के अंतर्गत अभी तक 18,305 लाख 96 हजार मानक दिवसों का सृजन किया जा चुका है और इसके लिए 12,259 करोड़ 54 लाख रुपये खर्च हो चुके हैं। स्वर्ण जयंती ग्राम रोजगार योजना की चर्चा करते हुए डा. रघुवंश प्रसाद सिंह ने कहा ग्रामीण गरीबों की बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए यह योजना लागू की जा रही है। यह स्वरोजगार के अवसर पैदा करने का एक बड़ा और समग्र कार्यक्रम है। इसमें स्वरोजगार के लिए सभी पहलुओं पर ध्यान दिया जाता है जैसे ग्रामीण गरीबों के स्वयं सहायता–समूहों का गठन करना, उन्हें प्रशिक्षण देना और उनकी क्षमता का निर्माण करना, व्यवसाय कौशल विकसित करना, सब्सिडी के जरिए सहायता देना, परसंपदा की खरीद के लिए कर्ज देना, प्रौद्योगिकी, विपणन और बुनियादी ढांचे के लिए समर्थन प्रदान करना। अब तक 19 लाख से अधिक स्वयं सहायता समूह बनाए जा चुके हैं और 9,559 करोड़ 12 लाख रुपये के पूंजी निवेश से 45 लाख से अधिक स्वरोजगारियों की सहायता की जा चुकी है। मंत्री महोदय ने कहा भूमि बहुत ही महत्वपूर्ण राष्ट्रीय संसाधन है। इसका कुशल प्रबंधन देहाती इलाकों के आर्थिक विकास और विस्तार के लिए बहुत महत्व रखता है। भूमि संसाधन विभाग के क्षेत्र विकास कार्यक्रमों जैसे समुचित ऊसर विकास कार्यक्रमों, सूखे की आशंका वाले क्षेत्रों के विकास कार्यक्रम और रेगिस्तान विकास कार्यक्रम के जरिए बंजर और खराब जमीन को ठीक करने और उपजाऊ बनाने के संगठित प्रयत्न किए जाते हैं। सभी क्षेत्र विकास कार्यक्रम वाटर शैड विकास के तौर तरीके से लागू किए जा रहे हैं। पंचायती राज संस्थाओं के माध्यम से लागू किए जा रहे वाटर शैड विकास कार्यक्रमों के लिए नई पहल शुरू की गई है लेकिन खराब हुई भूमि को खेती योग्य बनाने के विशाल काम को देखते हुए जरूरत इस बात की है कि समाज स्वयं जल संग्रहण कार्य करे। इसके साथ–साथ यह भी जरूरी है कि वर्ष के संग्रहीत पानी के कारगर भंडारण के लिए तालाबों और पोखरों आदि जल राशि क्षेत्रों से गाद निकालने की परियोजनाओं पर अमल किया जाए। सूखे से बुरी तरह प्रभावित क्षेत्रों खासकर पीने के पानी की समस्या से जूझ रहे क्षेत्रों के सूखे से उबरने और जल वृद्धि के लिए केंद्र द्वारा प्रायोजित प्रधानमंत्री ग्रामीण जल संवधन योजना शुरू की गई है। योजना में मुख्य जोर जल संग्रहण के जरिए पानी को बचाए रखने पर दिया गया है। वर्ष 2004–05 के दौरान इस स्कीम के लिए दो अरब रुपये का प्रावधान किया गया है। उन्होंने कहा पेयजल, मकान और सफाई सम्मानित जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है। मंत्रालय में पेयजल आपूर्ति का एक अलग विभाग बनाया गया है जो ग्रामीण जनता को सुरक्षित पेय जल उपलब्ध कराने में तेजी लाएगा। विभाग को आदेश दिया गया है कि वह वर्ष 2004 तक सभी गांवों को सुरक्षित पेयजल उपलब्ध कराए। ग्रामीण जल आपूर्ति और इसके रखरखाव में सामुदायिक भागीदारी को संस्थागत रूप देने के लिए कार्यक्रम को नई शक्ल दी गई है। यह काम 25 दिसंबर 2002 को स्वजलधारा के तहत आरंभ किया गया है। ग्रामीण जनता के पीने के पानी की आवश्यकता पूरी करने में काफी सफलता मिली है और 99 प्रतिशत बसाहाटों को पीने का सुरक्षित पानी मिलने लगा है। केंद्र और राज्य सरकारें दोनों ग्रामीण क्षेत्रों में पीने के पानी की आपूर्ति योजनाओं पर अब तक 48,000 करोड़ रुपये का निवेश कर चुके हैं।

स्वच्छता की चर्चा करते हुए ग्रामीण विकास मंत्री ने कहा ग्रामीण क्षेत्रों में सफाई और स्वास्थ्य में सुधार के लिए कई कदम उठाए गए हैं। लोगों की मांगें पूरी करने और खुश रखने के लिए केंद्रीय ग्रामीण सफाई कार्यक्रम को 1999 में पुनर्गठित किया गया। कार्यक्रम में घरों की सफाई, सुरक्षित पानी तथा कूड़े–कचरे और गंदे पानी के निपटारे पर जोर दिया गया है। कार्यक्रम में गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे लोगों के घरों में शौचालय बनाना, महिलाओं के लिए ग्रामीण सफाई परिसर बनाना तथा स्वास्थ्य शिक्षा और जागृत्ति पैदा करने का सघन अभियान चलाना शामिल है। संपूर्ण सफाई अभियान के दायरे में अब तक 426 जिले लाए जा चुके हैं। पंचायती राज संस्थाओं को प्रोत्साहन देने के लिए खुले में मल त्याग से शतप्रतिशत छुटकारा पाने के लिए निर्मल ग्राम पुरस्कार योजना शुरू की गई है। इससे इन संस्थाओं को अपना काम आगे बढ़ाने की काफी प्रेरणा और प्रोत्साहन मिला है। जो गांव पंचायतें सबसे अच्छा काम कर दिखाती हैं, उन्हें अप्रैल 2003 से राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किए जाने की प्रणाली शुरू की गई है।

ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक विकास और गरीबी निवारण में ग्रामीण सड़कों के महत्व का उल्लेख करते हुए ग्रामीण विकास मंत्री ने कहा कि प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना का उद्देश्य 500 से अधिक जनसंख्या वाली प्रत्येक ग्रामीण बसाहट को अगले तीन वर्षों यानी वर्ष 2007 तक बारहामासी मजबूत सड़कों से जोड़ना है। राज्यों के आधारभूत नेटवर्क पर आधारित संशोधित अनुमानों के अनुसार 170,600 बसाहटों को इस योजना के तहत जोड़ा जाएगा और

इस सारे काम पर 133,000 करोड़ रुपये खर्च होंगे। 1,02,701 किलोमीटर लंबाई में कुल 3,55,76 सड़क–कार्यों को मंजूरी मिल चुकी है। इसमें से 58,529 किलोमीटर यानी आधे से अधिक इलाके में 22,334 सड़क–कार्य पिछले अगस्त महीने तक पूरे किए जा चुके थे। उन्होंने कहा कि आवास, मानव अस्तित्व की एक मूलभूत आवश्यकता है। सरकार का लक्ष्य है कि सभी के लिए मकान की व्यवस्था की जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में मकानों की कमी दूर करने के लिए भारत सरकार इंदिरा आवास योजना को लागू कर रही है। यह एक व्यापक आवास योजना है, जिसके तहत मकान का आवंटन घर के महिला सदस्यों को या फिर पति पत्नी को संयुक्त रूप से किया जाना है। हाल ही में नए मकान बनाने के लिए सहायता राशि की सीमा, मैदानी इलाकों के लिए प्रति इकाई 20,000 रुपये से बढ़ा कर 25,000 रुपये तथा पहाड़ी और कठिन क्षेत्रों के लिए यह सीमा प्रति इकाई 22,000 रुपये से बढ़ा कर 27,500 रुपये कर दी गई है। योजना आरंभ होने के बाद से अब तक 21,000 करोड़ रुपये की लागत से लगभग 118 लाख मकान बनाए गए हैं। लाभार्थियों के चयन में पारदर्शिता से काम लेते हुए भ्रष्टाचार पर अंकुश रखा गया है।

ग्रामीण विकास मंत्री ने आरंभ में संपादक सम्मेलन में बताया कि नौवीं पंचवर्षीय योजना में उनके मंत्रालय के लिए 42,874 रुपये के आवंटन की तुलना में दसवीं योजना में 76,774 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है, यानी 33,900 रुपये अथवा तीन चौथाई से भी अधिक। अब ग्रामीण विकास के मानदंड बदल गए हैं तथा सोच में जबरदस्त बदलाव आया है ग्रामीण निर्धनों को निर्धन न मात्र कर संसाधनों का विशाल स्रोत माना जाता है। उनके विचारों अरमानों और अनुभवों को विकास कार्यनीति का अभिन्न अंग माना जाता है। विकास को समाज या समाज के किसी वर्ग पर ऊपर से थोपा नहीं जा सकता। विकास प्रक्रिया तभी आगे चलती–बढ़ती रह सकती है जब वह अनुभवों और मूल्यों की भागीदारी से तथा हार्दिक इच्छा और संकल्प से प्रेरित हो। इसी कारण ग्राम विकास की कार्यनीति, आयोजना, कार्यक्रमों के निर्धारण और कार्यान्वयन में ग्राम सभाओं की मार्फत जन भागीदारी पर जोर दिया जाने लगा है। अधिकतर ग्राम विकास कार्यक्रमों को लागू करने में पंचायती राज संस्थाओं को निर्णायक भूमिका प्रदान की गई है क्योंकि पंचायती राज संस्थाओं के कुशल संचालन में ग्रामसभा नींव का काम करती है। ग्राम सभा उनका प्राण और प्रेरणा है। विकास से जुड़े प्रत्येक काम पर ग्राम सभा में विचार होना चाहिए और उनकी रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए। इसके अलावा ग्राम सभा को विभिन्न स्कीमों से लाभान्वितों को चयन करना चाहिए और गांवों में लागू सभी कामों की, समाज कल्याण की दृष्टि से परखा जाना चाहिए। स्वतंत्रता और लोकतंत्र की रक्षा सतत निगरानी से ही हो सकती है। लोक लेखा परीक्षण के वास्तविकता बन जाने पर ही निधियों का अधिकतम उपयोग हो सकेगा और धन की बरबादी या उस का जाना होना बंद हो जाएगा।

डा. रघुवंश प्रसाद सिंह के शब्दों में केंद्र के एक रुपये में से सिर्फ 16 पैसे ही गांव तक पहुंचने की बात अब गई बीती बात हो गई है। अब गांवों की सारी राशि का उपयोग ग्रामीण कार्यों के लिए ही होता है। पारदर्शिता लोक–लेखा परीक्षण, सूचना पाने के अधिकार और जबाबदेही के सिद्धांत पर अमल के कारण ही यह सब संभव हो सकता है। संक्षेप में कह सकते हैं कि ग्राम विकास मंत्रालय सभी स्तरों पर गरीबों की दशा सुधारने के संकल्प के साथ – सड़कों, पानी, सिंचाई, स्वच्छता, रोजगार, खाद्यय सुरक्षा, निर्माण और जन भागीदारी की विविध योजनाएं और कार्यक्रम बनाकर उन्हें मुस्तैदी से लागू कर रहा है। उसका बजट विशाल है, लेकिन इसका उपयोग भ्रष्टाचार और घौटाले में न हो इसके लिए प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक स्तर पर निगरानी का पुख्ता प्रबंध किया गया है। गांवों और कृषि में पूंजी निवेश में आई गिरावट को बहुआयामी निर्माण कार्यों और उनसे होने वाली आय तथा क्रयशक्ति में वृद्धि के बल पर कुछ तो रोका जा सकता है। इतना ही नहीं रोजगार के नए–नए अवसर बढ़ने से और लोगों की जरूरतें गांवों में ही पूरी होने पर शहरों की तरफ पलायन घटता चला जाएगा। गांवों और शहरों के बीच दिखाई देने वाला अंतर निश्चित ही दिन दिन कम होता चला जाएगा। इससे शहरों की बढ़ती आबादी पर कुछ तो विराम लगेगा और गांवों में भी नया जीवन हिलोरे लेने लगेगा। इन युगतिकारी कार्यक्रमों के मूर्तरूप लेते जाने से हर हाथ को काम मिलेगा, काम के बदले नकद और खाद्यान्न दोनों मिलने से भूख से मरने या अल्पाहार अथवा कम पौष्टिक भोजन से बीमार पड़ने या फिर खाली पेट पड़े रहने की घटनाएं कम हो जाएंगी। यह सही है कि अब गांवों में शहरों जैसी सुविधाएं निरंतर अधिक उपलब्ध होती जा रही हैं और आर्थिक उदारीकरण के बढ़ते कदमों के साथ ही आर्थिक गतिविधियों में चौतरफा तेजी आते जाने से ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति खपत भी बढ़ी है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में शहरी क्षेत्रों की तुलना में सरकारी बैंकों और अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों का कर्ज प्रवाह घटता चला गया है। 1990–91 में ग्रामीण और अर्धशहरी इलाकों में सरकारी क्षेत्र के बैंकों से क्रमशः 15.40 और 17.14 प्रतिशत कर्ज उपलब्ध हुआ था, जो वर्ष 2003–04 तक घटते–घटते क्रमशः 9.57 और 11.35 प्रतिशत रह गया। दूसरी तरफ महानगरीय क्षेत्रों में इस अवधि के दौरान बैंक ऋण 44.87 प्रतिशत से बढ़ते–बढ़ते 61.50 प्रतिशत तक पहुंच गए।

सरकार को देखना होगा कि ग्रामीण क्षेत्रों में चमक लाने के बहुआयामी कल्याण कार्यों के साथ–साथ, कृषि कार्यों, कृषि परक कुटीर और लघु उद्योगों, छोटे–छोटे व्यवसायियों तथा स्वयंसेवी समूहों तथा जनहित कार्यों में संलग्न अन्य गैर–सरकारी संगठनों तथा व्यक्तियों को बैंकों से आसान शर्तों पर कर्ज मिलने में कोताही नहीं होनी चाहिए। तभी गांधीजी के ग्राम स्वराज का सपना सरकार होने में सहायता मिलेगी और गांव सही मायने में लोकतंत्र की लघु इकाइयां बन सकेंगे। साथ ही ग्रामीण विकास मंत्रालय के उपलब्ध संचार साधनों का अधिकाधिक उपयोग कर ग्रामवासियों को उनके महत्व अधिकारों, स्थिति, उसमें सुधार और विभिन्न लक्ष्यों की प्राप्ति के प्रयासों और उपलब्धियों आदि की पूरी जानकारी देकर उन्हें आगे और बढ़ते जाने की प्रेरणा देनी होगी तथा मार्गदर्शन करना होगा। ❑

(लेखक : स्वतंत्र पत्रकार हैं)

21वीं सदी में दलितों की दशा एवं दिशा

डा. बाल मुकुन्द बघेल

आर्थिक उदारीकरण के इस युग में समाज के आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं शैक्षणिक विकास के लिए जरूरी है कि समाज के सभी वर्गों का समान रूप से विकास हो तथा देश में समाजवादी समाज की स्थापना हो। किन्तु यदि हम स्वतंत्रता के 56 वर्ष बीत जाने के बाद समाज के आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक विकास के दृष्टिकोण से समाज के प्रत्येक वर्ग की स्थिति का विश्लेषण करें तो पाते हैं कि किसी भी वर्ग का अपेक्षित विकास नहीं हुआ है और यदि हम समाज में दलित कहे जाने वर्ग की स्थिति का विश्लेषण करें तो विकास की बात तो दूर समाज का यह तबका आज भी शोषित एवं अस्पृश्यता से पीड़ित है।

दलितों के विकास एवं उत्थान के लिए स्वतंत्रता पश्चात केंद्र एवं राज्य सरकारों ने कई योजनाएं बनाईं एवं क्रियान्वित की किंतु योजनाओं का ईमानदारीपूर्वक क्रियान्वयन न होने से दलित वर्ग गरीब, अशिक्षित एवं शोषित ही बने रहे। आज भी यह वर्ग विकास की बाट जोह रहा है एवं अपने विकास के लिए उच्च वर्गों पर ही अवलंबित है। संवैधानिक प्रावधान होने के बावजूद इन्हें अत्याचार एवं अन्याय का समान करना पड़ रहा है और इसका मूल कारण इस वर्ग के लोगों में अशिक्षा एवं अज्ञानता का व्याप्त होना है। अशिक्षा एवं अज्ञानता के कारण ये अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति अभी पूर्ण सजग नहीं हो पाए हैं। बीती सदी में केवल आरक्षण व्यवस्था को कारगर उपाय मानकर संपूर्ण ध्यान इसी पर केंद्रित रहा है। आरक्षण व्यवस्था के सकारात्मक परिणाम भी सामने आए। किंतु इसका सबसे ज्यादा लाभ शिक्षित, सजग एवं शहरी क्षेत्र में निवास करने वाले दलितों ने ही उठाया है। ग्रामीण क्षेत्र में कृषक या भूमिहीन मजदूर के रूप में जीवन–यापन करने वाले दलित वर्गों में शिक्षा

की सर्वाधिक कमी है अतः वे इस लाभ से वंचित हैं। ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाले दलित आज भी कई प्रकार की रूढ़ियों एवं अंधविश्वासों में जकड़े हुये हैं। यही कारण है कि ग्रामीण सामंतवादी वर्ग इनकी इसी अज्ञानता, अंधविश्वास एवं नासमझी का फायदा उठाकर शोषण करने में सफल हो जाते हैं।

देश में कुल रोजगार का 92 प्रतिशत हिस्सा असंगठित क्षेत्र से आता है। इस असंगठित क्षेत्र में काम करने वालों में बड़ी संख्या में अनुसूचित जाति/जनजाति के लोग शामिल हैं। भारत में आरक्षण की अवधि 52 वर्ष हो चुकी है। इन 52 वर्षों में आरक्षण रूपी रामबाण औषधि के सेवन से दलितों में शिक्षा, रोजगार और अन्य सुविधाओं का लाभ उठाने की पहल हुई है किंतु नई सदी में आरक्षण को निर्णायक साधन मानना न्यायोचित नहीं है। अब समय आ गया है कि 21वीं सदी में दलितों के समग्र विकास के बारे में नए सिरे से विचार किया जाए क्योंकि अब सिर्फ शासकीय आरक्षण के भरोसे दलितों का विकास नहीं किया जा सकता।

भारत में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के वर्ग के कुल 25 करोड़ लोग निवास कर रहे हैं। केंद्रीय श्रम मंत्रालय के वार्षिक प्रतिवेदन 2000–2001 के अनुसार राज्य (केंद्र सरकार, सार्वजनिक क्षेत्र इकाइयां, राज्य सरकारों, स्थानीय निकायों) के तहत 194.11 लाख नौकरियां हैं। इसमें से 22.5 प्रतिशत स्थानों को अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के लिए सुरक्षित रखा गया है। इस प्रकार अधिकतम रोजगार के अवसर 43.67 लाख निर्धारित हैं। मान लीजिए एक अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग का कर्मचारी पांच आश्रितों का पालन करता है तो इसका लाभ 218.35 लाख की जनसंख्या तक पहुंचेगा। अब हम निजी क्षेत्र में आरक्षण की बात करें तो केंद्रीय श्रम मंत्रालय के अनुसार इस क्षेत्र में कुल उपलब्ध रोजगार के अवसर 86.98 लाख है। यदि ईमानदारी से निजी क्षेत्र में आरक्षण लागू किया जाए तो 19.57 लाख अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लोगों को नौकरियां मिलेंगी। इसमें पहले से ही अकुशल

एवं अर्द्धकुशल पदों पर कुछ लोग कार्यरत हो सकते हैं। इस प्रकार 19.57 लाख को 5 से गुणा कर दिया जाये तो 97.85 लाख लोगों को लाभ मिलेगा। इस प्रकार निजी एवं सार्वजनिक दोनों क्षेत्रों को मिलाकर अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के लिये कुल रोजगार के अवसर 63.24 लाख होते हैं इन 63.24 लाख में 5 का गुणा करने से इसका लाभ 316.20 लाख लोगों तक पहुंचता है। अब 21 करोड़ 83 लाख 80 हजार अनुसूचित जाति एवं जनजाति लोग शेष रहेंगे। यह शेष आंकड़ा आरक्षण और आरक्षण के लिए आन्दोलन की सीमाओं दर्शाता है।

विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि कुल उपलब्ध रोजगार के अवसर 281.09 लाख में से 63.24 लाख रोजगार के अवसर केवल अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिये सुरक्षित हैं। जबकि पहले से ही 63 लाख शिक्षित कुशल बेरोजगार अनुसूचित जाति एवं जनजाति के नौकरी की तलाश में भटक रहे हैं। एक आकलन के अनुसार दोनों क्षेत्रों में (सार्वजनिक एवं निजी) लगभग 15 प्रतिशत स्थान (42.16 लाख) पहले से ही अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के व्यक्तियों से भरे हुए हैं। अब बेरोजगार अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के नवयुवकों के लिए केवल 21 लाख स्थान शेष बचते हैं।

अनुसूचित जाति/जनजाति का मुख्य कार्यबल 783.49 लाख है जिसे आर्थिक रूप से मजबूत करने में आरक्षण की बैसाखी सहारा नहीं दे सकती अर्थात अब दलित वर्ग को आरक्षण एवं पारंपरिक जाति आधारित पेशे के चक्रव्यूह से बाहर निकालना ही होगा और उद्योग, व्यापार एवं वाणिज्य आदि के क्षेत्र में अपनी सहभागिता बढ़ाकर अपनी अलग पहचान बनानी होगी। इसके लिए निम्न उपाय अपनाये जा सकते हैं :

शिक्षा का विस्तार

शिक्षा व्यक्ति को ज्ञानवान एवं संस्कारवान बनाती है। शिक्षा व्यक्ति में समझ पैदा करने में सहायक होती है। शिक्षित व्यक्ति अपने अधिकार एवं कर्तव्यों को समझने में सक्षम होता है। भारत में अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के वे व्यक्ति जिन्होंने समाज या देश में उचित स्थान अर्जित किया है चाहे वह शासकीय सेवक, व्यापारी, राजनीतिज्ञ या

महिला वर्ग हो सभी ने अपने परम्परागत पेशे से हटकर ही अपना स्थान कायम किया है। चाहे शिक्षा पारंपरिक पेशे से मुक्ति में मददगार हो या न हो किंतु अनुसूचित जाति एवं जनजाति के प्रत्येक सदस्य के लिए शिक्षा जरूरी है। अतः सरकार सहित समस्त प्रकार के सामाजिक संगठनों को यह कोशिश करनी चाहिए कि इन वर्गों में शिक्षा का विकास एवं विस्तार हो। मुख्य रूप से दलित महिलाओं की स्थिति शिक्षा के मामले में अत्याधिक दयनीय है। अतः महिला शिक्षा पर विशेष जोर देने की जरूरत है क्योंकि परिवार की एक महिला के शिक्षित होने पर संपूर्ण परिवार शिक्षा की ओर अग्रसर होता है।

आत्मनिर्भरता पर विशेष बल

समाज की आधारशिला को मजबूती प्रदान करने के लिए जरूरी है कि समाज आर्थिक रूप से समृद्ध हो इसके लिए आत्म–निर्भरता पर ध्यान देने की जरूरत है। स्वतंत्रता के बाद से ही पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा ग्रामीण एवं शहरी नवयुवक/नवयुवतियों को स्वरोजगार स्थापित करने हेतु प्रोत्साहित करने के लिए अनेक योजनाएं संचालित की जा रही हैं जिनमें विभिन्न ट्रेडों यथा, सिलाई, टाइपिंग, हाथकरघा, बांस के बर्तन बनाना, कारपेंटरी, मोटर वाइडिंग आदि में निःशुल्क प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग के नवयुवकों को स्वरोजगार लगाने हेतु बैंकों के द्वारा ऋण के रूप में वित्तीय सहायता भी प्रदान की जाती है। यदि दलित वर्गों को उद्यम लगाने, स्वरोजगार स्थापित करने के लिए प्रेरित किया जाये तो वे आत्मनिर्भर बनेगें और उनका आत्म विश्वास भी बढ़ेगा, तथा समाज में उनका सम्मान भी बढ़ेगा। वे आरक्षण की बैसाखी के भरोसे नहीं रहेंगे।

योजनाओं का प्रभावी क्रियान्वयन

दलित वर्गों के विकास के कार्यक्रमों का निर्धारण और क्रियान्वयन एक गंभीर चिंतन का विषय है। केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा इन वर्गों के लिए विभिन्न योजनाएं तो बनायी जाती हैं पर प्रभावी क्रियान्वयन के अभाव में जरूरतमंद व्यक्ति तक इनका लाभ नहीं पहुंचता और कुछ निहित स्वार्थी तत्वों की आवश्यकताओं के अनुरूप ही ये कार्यक्रम क्रियान्वित किये जाते हैं। अतः आवश्यकता है दलित वर्गों के लिए बनाए गए कार्यक्रमों को प्रभावी क्रियान्वयन एवं पर्यवेक्षण की। ऐसे व्यक्तियों को चिन्हित करने की जो क्रियान्वयन में बाधक बने रहे हैं। दलित वर्गों का शोषण करने वाले इन स्वार्थी तत्वों के लिए कठोर दण्ड का प्रावधान किया जाना चाहिए।

जनसंख्या वृद्धि एवं गरीबी

भारत में आज जितनी भी समस्याएं हैं उनके पीछे जनसंख्या वृद्धि ही मूल कारण है। दलित वर्गों में जनसंख्या वृद्धि का कारण

अज्ञानता एवं अशिक्षा है और जनसंख्या के कारण इन्हें गरीबी रेखा के नीचे जीवन निर्वाह करने को मजबूर हैं। गरीबी के कारण ये बीमारियों एवं कुपोषण से ग्रस्त रहते हैं। दलितों का आर्थिक उत्थान करने के लिए जरूरी है कि उन्हें जनसंख्या वृद्धि के नुकसानों से अवगत कराया जाये तथा परिवार नियोजनों के साधनों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाये साथ ही गरीबी दूर करने के लिए योजनाबद्ध रूप से विशेष योजनाएं तैयार कर क्रियान्वित की जाएं।

पंचायतों में प्रतिनिधित्व

त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था के अन्तर्गत विगत वर्षों में जिन राज्यों में चुनाव हुए उन सभी राज्यों में दलित वर्गों को पर्याप्त आरक्षण प्रदान किया गया। आंकड़ों के दृष्टिकोण से अगर देखा जाए तो भारत के 25 राज्यों (अविभाजित उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश एवं बिहार सहित) एवं 7 केंद्र शासित प्रदेशों में निर्वाचित अनुसूचित जाति एवं जनजाति के ग्राम पंचायत सदस्यों की कुल संख्या 5,83,980 है जिसमें से 27,309 सदस्य पंचायत समिति के हैं। इसी प्रकार जिला परिषद में अनुसूचित जाति एवं जनजाति सदस्यों की संख्या 3,151 है। पंचायतों में अनुसूचित जाति और जनजाति के सदस्यों का प्रतिशत क्रमशः 16.37 प्रतिशत एवं 7.95 प्रतिशत है। पंचायतों में मिले आरक्षण से दलित वर्गों की स्थिति में थोड़ा सुधार तो आया है परंतु आज भी गांव में सामंतवादी वर्ग के दबाव में इन्हें काम करना पड़ता है उनके अनुकूल निर्णय लेने होते हैं। किंतु इस सबके बावजूद भी पंचायतों में प्रतिनिधित्व दलित सशक्तिकरण की प्रक्रिया की एक शुरूआत है जिसे जारी रखा जाना चाहिए। सवर्णो को चाहिए कि वे दलितों को अपना सहयोगी मानकर कार्य करें उन्हें इज्जत दें, सम्मान दें। दलित वर्ग को भी चाहिए कि वह आरक्षण या पद का दुरुपयोग न करें।

रोजगारोन्मुखी शिक्षा

दलित वर्ग में आदिवासियों का हमेशा से निर्मम शोषण होता रहा है। जिन क्षेत्रों में आदिवासी लोग निवास करते हैं वे क्षेत्र प्राकृतिक संसाधन की दृष्टि से अति समृद्ध क्षेत्र है। वहां न सिर्फ वन संपदा है बल्कि असीमित खनिज भंडार भी हैं। स्वतंत्रता के बाद से ही कच्चे माल के लिए इन संपदाओं का दोहन किया गया। बड़ी–बड़ी विद्युत एवं सिंचाई परियोजनाएं खड़ी की गईं। राऊरकेला, भिलाई–रांची, बेलाडीला, हीराकुंड आदि इसके उदाहरण हैं। विकास के प्राकृतिक परिणामों से संबंधित आदिवासी जनसंख्या का आर्थिक उत्थान होना चाहिए था पर ऐसा नहीं हो सका। अब समय आ गया है कि इन औद्योगिक क्षेत्रों में निवास करने वाले आदिवासियों को रोजगारोन्मुखी शिक्षा दी जानी चाहिए ताकि इन्हें कृषि आधारित उद्योग, खनिज आधारित उद्योगों में रोजगार मिल सके तथा ये आदिवासी विस्थापित होने से बच सकें। आदिवासियों को भूमि के बदले क्षतिपूर्ति न देकर इन परियोजनाओं में रोजगार दिया जाना चाहिए।

संरक्षण एवं सामाजिक सुरक्षा

राष्ट्रीय प्रादर्श सर्वेक्षण के अनुसार भारत के मुख्य कार्यबल में से केवल 8 प्रतिशत संगठित क्षेत्र में है और शेष 92 प्रतिशत असंगठित क्षेत्र में। संगठित क्षेत्र में तो अनुसूचित जाति एवं जनजाति वर्ग को थोड़ी राहत है, अच्छी मजदूरी है, रोजगार की सुनिश्चितता है, अधिकारों के संरक्षण का प्रावधान है किंतु असंगठित क्षेत्र जैसे खेतों में काम करने वाले, खदानों में काम करने वाले दलित वर्गों के लिए ऐसे श्रम कानून बनाये जाने चाहिए जिनसे उनके अधिकारों का संरक्षण हो सके तथा इन वर्गों को सामाजिक सुरक्षा मिल सके।

नीतियों का अनुसरण

मध्य प्रदेश शासन की भांति अन्य राज्यों में भी गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले, भूमिहीन दलित वर्गों को चरनोई भूमि का आवंटन करना चाहिए ताकि वे इस भूमि पर मकान बनाकर, कृषि संबंधी कार्य कर अपनी जीवन निर्वाह कर सके। इसी प्रकार दलितों के उत्थान को लेकर समय–समय पर राष्ट्रीय सेमीनार एवं संगोष्ठियों का आयोजन किया जाना चाहिए। इन संगोष्ठियों में विचार–विमर्श के बाद जो निष्कर्ष निकले उसके क्रियान्वयन में राष्ट्रीय एवं राजकीय स्तर पर एक सुनियोजित नीति बनाई जानी चाहिए।

निष्कर्ष

स्वतंत्रता पश्चात् संविधान में दलित वर्गों के लिए शासकीय नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था की गई थी ताकि विकास की धारा से पिछड़ चुके दलित वर्ग के सदस्य आर्थिक, शैक्षणिक, सामाजिक एवं राजनैतिक दृष्टिकोण से समाज के अन्य वर्गों की भांति सम्मान पूर्वक अपना जीवन निर्वाह कर सके तथा शोषण से बच सकें और दलित गैर–दलित एवं गरीब–अमीर की खाई को पाटा जा सके।

स्वतंत्रता के पश्चात् लगभग सभी दलित आंदोलनों में आरक्षण का मुद्दा बारंबार सामने आया और इसे विकास का एकमात्र निर्णायक साधन माना जाने लगा। आरक्षण पर विश्वास का एक कारण यह भी रहा कि बहुत से राज्यों में विभिन्न विभागों में आरक्षित कोटा खाली रह गया है। दलित आंदोलन में निर्धारित कोटा को भरने के लिए अपनी प्रगति और शोषण मुक्ति में शासकीय नौकरियों में आरक्षण की सीमित भूमिका को भी समझना चाहिए। 21वीं सदी में दलितों की दशा और दिशा में बदलाव लाने की जरूरत है। इस सदी में जरूरत है कि सरकार, स्वैच्छिक संगठन, गैर शासकीय संगठन एवं दलित आंदोलन के संचालक आदि समस्त माध्यम मिलकर दलित वर्ग के शैक्षणिक एवं आर्थिक उन्नयन पर बल दें, उन्हें उद्योग, व्यापार वाणिज्य में अपनी शक्ति लगाने के लिए प्रेरित करें। अंत में हमें जोर देना होना 26 जनवरी 1950 को की गई उस परिकल्पना पर जिसमें सोचा गया था कि भारतीय गणतंत्र का जन्म इस लिखित बन्धन के साथ होगा कि भारतीय राज्य एक ऐसा रास्ता निकालेगा जिसमें वर्ण व्यवस्था में शामिल और निष्कासित लोगों के बीच सभ्यताओं के द्वंद, विशिष्टताएं आपसी द्वेष, अविश्वास, अन्य शब्दों में दलितों और गैर–दलितों के बीच दूरियां हमेशा के लिए समाप्त हो जायेंगी। तब भारतीय समाज एक नागरिक व्यवस्था की स्थापना करेगा जहां पुरुषों और महिलाओं को उनके गुण, बुद्धिमत्ता, योग्यता के द्वारा पहचाना जायेगा न कि जन्म के आधार पर। स्वतंत्रता के 55 वर्षों के बाद भी यह सपने पूरे नहीं हुए हैं अतः सपनों को साकार करने तथा 21वीं सदी में दलितों के उत्थान एवं विकास के बारे में नये सिरे से चिन्तन करके दलितों के भविष्य निर्माण की नई रणनीति बनानी होगी। ❑

(लेखक स.रा. शास. महिला पॉलीटेक्निक महाविद्यालय, सागर में व्याख्याता हैं)

COSMOS BOOKHIVE

a TESTED and TRUSTED name in PUBLISHING

SPECIALISATION
· UGC - NET / SLET - CSIR · CIVIL SERVICES / STATE SERVICES (PREL & MAIN)
· Books on Core Subjects: *Reasoning, Q. Aptitude, Eng. Language*

We Lead, others follow

CIVIL SERVICES / STATE SERVICES PRELIMINARY

1.	Agriculture	125.00	2.	Botany	140.00
3.	Chemistry	220.00	4.	Commerce (revised)	360.00
5.	Economics (revised)	360.00	6.	Geography	235.00
7.	Indian History	320.00	8.	Indian Constitution	72.00
9.	Law (revised)	370.00	10.	Mathematics (revised)	390.00
11.	Psychology	210.00	12.	Political Science	435.00
13.	Physics	270.00	14.	Sociology	220.00
15.	Zoology (revised)	375.00	16.	Public Admn.	410.00
17.	Syllabus (C.S.)Main+Pre	45.00	18.	मनोविज्ञान (Prelimns)	300.00
19.	अर्थशास्त्र	350.00	20.	भारत का इतिहास	280.00
21.	राजनैतिक शास्त्र	325.00	22.	समाज शास्त्र	100.00
23.	वाणिज्य	300.00	24.	लोक प्रशासन	290.00
25.	भूगोल	115.00	26.	विधि	115.00

I.C.S. (MAIN) / STATE SERVICES MAIN

26.	Advanced Essays (Covering Latest Topics)				115.00
27.	Advanced Physics Revised Edition				290.00
28.	General English (with up-to-date solved papers)				135.00
29.	Commerce Paper I (Part I) Acct., Auditing & Taxation				350.00
30.	Gandhi, Tagore, Nehru				35.00
31.	Hindi for Civil Services (with upto-date solved papers)				130.00
32.	Ancient And Medival History				250.00
33.	Modern India	120.00	34.	World History	185.00
35.	General Sociology	130.00	36.	Society in India	165.00
37.	Political Theory & Indian Politics (Section A)				220.00
38.	Indian Government & Politics (Section B)				350.00
39.	Comparative Politics and International Relations				300.00
40.	Foreign Policy of India (Revised Edition)				130.00
41.	Foreign Policy of Major Powers				150.00
42.	Indian Economy – Focus on Current Events				200.00
43.	Western and Indian Political Thinker				180.00
44.	Plato to Marx-Political Thought				180.00
45.	Indian Government and Politics				325.00
46.	International Politics				200.00
47.	World Constitutions				165.00
48.	Constitutional Development and National Movement in India				200.00
49.	Public Administration (Paper I) (Revised Ed.)				325.00
50.	Public Administration (Paper II) (Revised Ed.)				325.00
51.	UNO (Revised)	125.00	52.	गांधी, टैगोर, नेहरू	45.00
53.	भारत का इतिहास (प्राचीन तथा मध्यकालीन)				170.00
54.	आधुनिक भारत का इतिहास	90.00	55.	विश्व का इतिहास	135.00

SPECIALISED BOOKS ON CORE SUBJECTS

1.	Test of Reasoning (S.L. Gulati) Revised Ed.				240.00
2.	Quantitative Aptitude Test (S.L. Gulati)				240.00
3.	Sharp Focus MBA Mathematics (S.L. Gulati)				240.00
4.	Mathematics for NTSE (S.L. Gulati)				200.00
5.	Objective Arithmetic (Big)(S.L. Gulati)				220.00
6.	S.S.B. Interviews	100.00	7.	Group Discussions	90.00
8.	Advanced Essays	115.00	9.	वस्तुनिष्ठ अंक गणित(S.L. Gulati)	190.00
10.	आधुनिक निबन्ध (नवीन एवं सामयिक विषयों सहित)				125.00
11.	निबन्ध सौरभ (नवीन एवं सामयिक विषयों सहित)				90.00

COSMOS BOOKHIVE'S **ULTIMATE SUCCESS SERIES** — **The Trend Setter** — **Practice Papers for Competitive Exams.**

- BANK P.O. (Eng. & हिन्दी)
- CAT
- MBA
- MAT
- BIO-TECHNOLOGY
- A.I.E.E.E.
- A.I.P.M.T.
- R.R.B. Tech (Eng. & हिन्दी)
- R.R.B. Non-Tech (Eng. & हिन्दी)
- L.L.B.
- B.S.R.B. Clerical (Eng. & हिन्दी)
- N.D.A
- CDS
- MAT
- SSC GRADUATE (Eng. & हिन्दी)
- AIR HOSTESS
- RBI OFFICERS
- DMRC/SCTO - Clerical (Eng & हिन्दी)
- NTSE
- JST
- MASS COMMUNICATION ENTRANCE EXAMS (objective Type)
- IIMC Entrance Exam - JNU (Subjective Type) (Also useful for other universities following the same pattern of E

For Advance Booking send MO/DD of Rs.50/- in favour of 'COSMOS BOOKHIVE (P) LTD.'

UGC - NET / SLET - CSIR

HIGHLIGHTS OF THESE BOOKS: According to the latest syllabus (due to the extensiveness of the syllabus, it is not practically possible to cover it completely. We have included all the important sections) · Synopsis for Paper I & II · Test Papers (based on the trends of actual papers) for Paper I, II, III · Detailed study material useful for Paper II, III · The book is a complete package. You do not require separate papers

1.	UGC Mental Ability Paper 1 *(Thoroughly Revised Edition)* (Common for all Subjects)				300.00
2.	UGC History	325.00	3.	UGC Political Science	250.00
4.	UGC Economics	280.00	5.	UGC Commerce	300.00
6.	UGC Sociology	275.00	7.	UGC English Literature	400.00
8.	UGC-CSIR Science (Paper-1 [Part A])				290.00
9.	UGC-CSIR Phy. Scs.	450.00	10.	UGC-CSIR Chem. Scs.	400.00
11.	UGC-CSIR Math. Scs.	320.00	12.	UGC-CSIR Life Scs.	290.00
13.	UGC Environmental Sciences				225.00
14.	UGC Public Admin.	240.00	15.	UGC Psychology	250.00
16.	UGC Management	300.00	17.	UGC Education	250.00
18.	UGC Law	225.00	19.	UGC Geography	275.00
20.	UGC Mass Communication & Journalism (1500 pages)				650.00
21.	UGC Tourism Administration & Management (1200 pages)				525.00
22.	UGC Anthropology	280.00	23.	UGC Computer Science	300.00
24.	UGC Philosophy	300.00	25.	UGC Electronic Science	in press
26.	UGC Library Science	375.00	27.	UGC Home Science	460.00
28.	UGC Physical Education	320.00	29.	UGC Woman Studies	300.00
30.	UGC प्रश्न-पत्र-1 (NET) (Throughly Revised)				360.00
31.	UGC संस्कृत	375.00	32.	UGC शिक्षा शास्त्र	260.00
33.	UGC हिन्दी साहित्य	315.00	34.	UGC अर्थशास्त्र	270.00
35.	UGC राजनीति	220.00	36.	UGC इतिहास	260.00
37.	UGC वाणिज्य	260.00	38.	UGC समाजशास्त्र	225.00
39.	UGC लोक प्रशासन	275.00	40.	UGC भूगोल	450.00
41.	UGC विधि	400.00	42.	UGC दर्शन शास्त्र	275.00
43.	UGC मनोविज्ञान	275.00			
44.	UGC पर्यावरण विज्ञान	350.00	45.	UGC Population Studies	300.00

LATEST RELEASES

1. English Improvement Course (for all Comp. Exams based on latest trends)	*220.00*
2. Quick Revision Arithmetic (for SSC/RRB/Banking/NTSE etc.) S.L. Gulati	*75.00*
3. Quick Revision Intelligence Test (S.L. Gulati)	*75.00*
4. How to Prepare for Interviews (Important Tips)	*75.00*
5. Subjective Arithmetic Specially forSSC main Exam. (S.L. Gulati)	*150.00*
6. तर्क-शक्ति 800 pages (शाब्दिक-अशाब्दिक) पूर्णतया संशोधित एवं परिवर्धित (सभी प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए)	*350.00*
7. INDIAN ECONOMY (for all Comp. Exams.)	*180.00*

Including: • *National Income* • *Economic Planning* • *Human Development* • *Census-2001* • *Poverty in India* • *Unemployment in India* • *Agriculture in India* • *Industrial Development* • *Public Finance* • *Money & Banking* • *Inflation* • *Foreign Trade* • *International Institutions*

COSMOS BOOKHIVE'S
Supplement to UGC Paper - 1
(as per changes made by UGC in the Syllabus for Paper - 1)
Covering the following topics:
• Information & Technology (सूचना एवं प्रौद्योगिकी) • Communications (संचार)
• People and Environment (जन एवं पर्यावरण) • Higher Education System (उच्च शिक्षा प्रणाली)
• Government, Politics & Administration (शासन, राजनीति एवं प्रशासन)
• **Highlights:** • Study Material with Multi choice Questions • Solved Question paper of JUNE-04 (Based on Memory) • Three New Model papers including questions on new topics.
SEND Rs.140/- & BOOK YOUR COPY IN ADVANCE

1. Send *full value* of the order in advance. Add Rs. 30/- as postage for one book. For subsequent books add 20/- per book. *V.P.P. order will not be executed*. The books will be despatched by Regd. Post only.
2. Advance payment may be sent by M.O./Draft. *Postal Orders will not be accepted.*
3. Our books are available at all leading book stores in India.

Enquiries for DEALERSHIP are SOLICITED

MO, Draft in favour of:

COSMOS BOOKHIVE (P) LTD.

Corporate Office : 831, Phase-V, Udyog Vihar, Gurgaon, Haryana-122016
Phones : 5001086, 87, 88 (prefix 95124 from Delhi)
e-mail: booksforall@bookhiveindia.com

BEWARE OF THE OTHER SUBSTANDARD SIMILAR BRAND NAMES. WE ARE NOT ASSOCIATED.

© Advtg.: Nov-2004/ nmcdelhi@yahoo.com, 9811555767

भारत के आदिवासी जीवन की जुगत में

डा. ऋतु सारस्वत

सभी मानव समाज चाहे आदिम हो या सभ्य समस्या विहीन कभी भी नहीं रहे, उनमें न्यूनाधिक मात्रा में समस्याएं सदैव विद्यमान रही हैं। यहां तक तो ठीक है कि समस्याएं जीवन की सामान्य गति को चाहे अनचाहे बाधित करती हैं परंतु यदि समस्याएं जीवन को मृत्यु में तबदील करने लगें तो यह सभ्य एवं आधुनिक कहे जाने वाले समाज के लिए शर्मिंदगी का विषय होगा और बेहद दुख की बात है, कि ऐसा हो रहा है।

भारत का जनजातीय समाज आज स्वतंत्रता के पचास दशक बीत जाने के बाद भी जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं के लिए संघर्ष कर रहा है। कुछ दिनों से राजस्थान प्रदेश की 'सहरिया' जनजाति सुर्खियों में है। एक दैनिक समाचार पत्र में छपी खबर के अनुसार 'सहरिया जनजाति क्षेत्र में तमाम समस्याओं की जड़ कुपोषण है। कुपोषण से हर गांव में सलाना 12 से 13 मौतें हो रही हैं। यह स्थिति बच्चों, महिलाओं और पुरुषों में एक जैसी है। सहरिया स्त्री–पुरुष की औसत आयु 50 साल रह गयी है। इसी संदर्भ में 16 सितंबर को सर्वोच्च न्यायालय ने भूख और खाद्य सुरक्षा के सवाल पर पी यू सी एल (पीपुल्स यूनियन फार सिविल लिबर्टीज) बनाम केंद्र और राज्यों के बीच जारी एक मामले में सुनवाई के दौरान राजस्थान सरकार को कड़ी फटकार लगाते हुए उससे भुखमरी से हो रही मौतें के बारे में स्पष्टीकरण मांगा। सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य सरकार को स्पष्ट निर्देश दिए कि आदिम जनजाति के लिए जिन खाद्य और सामाजिक सुरक्षा योजनाओं की घोषणा कर रही है, उन पर तुरंत अमल करें। सर्वोच्च न्यायालय ने देश भर में अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रही आदिम जनजातियों को निर्धनतम लोगों को मिलने वाली खाद्य एवं सामाजिक सुरक्षा संबंधी सुविधाएं देने का निर्देश दिया है।

यह स्थिति सिर्फ राजस्थान के आदिवासियों की नहीं है। हाशिए पर टिके बेहद गरीब और उपेक्षित भारत के आदिवासी भूख एवं कुपोषण का शिकार हो रहे हैं। प्राथमिक चिकित्सा और शिक्षा उनकी पहुंच से बहुत दूर है एक अन्य साप्ताहिक पत्रिका में प्रकाशित खबर के अनुसार जहां झारखंड के पलामू प्रमंडल के परहिया और कोखा जनजाति बहुल गांव हेसानु में जून 2004 के पहले सप्ताह में चेचक से 14 बच्चों की मौत हुई वहीं पलामू और देवघर समेत कई जिलों (झारखंड) के आदिवासी इलाकों में भुखमरी जैसी स्थिति व्याप्त है।

कृषि प्रधान देश (भारत) में जहां अनाज गोदामों में सड़ जाता है वहां हजारों बच्चे भूख से दम तोड़ देते हैं। पश्चिम बंगाल से लेकर महाराष्ट्र का आदिवासी इलाका इसलिए चर्चा में है कि वहां भुखमरी से बच्चों के जीवन की डोर बड़े होने से पहले ही टूट रही है। विदर्भ के अमरावती जिले की धारणी और चिखलदरा तहसील को मिलाकर बना क्षेत्र मेलघाट भी भूख और कुपोषण की दारुण स्थिति से गुजर रहा है।

पूरे एशिया में सघनतम जंगल वाला इलाका है मेलघाट और यहां अप्रैल 2004 से लेकर जून 2004 तक 72 बच्चों की मौत हो चुकी है। यहां हर साल बरसात में नवजात शिशु से लेकर पांच छह साल के बच्चे बड़ी संख्या में मरते हैं और उसका कारण होता है गरीबी और कुपोषण। करीब दो लाख की आबादी वाले इस क्षेत्र की तमाम सरकारी योजनाओं और भरे गोदामों के बावजूद भूख के शिकार 'कोरकु' आदिवासियों के लिए पेट भर अनाज नहीं जुट पाता।

विदर्भ में सिर्फ मेलघाट ही नहीं है जहां बच्चे कुपोषण के शिकार होते हैं। नागपुर, भंडारा, यवतमाल, चंद्रपुर और गढ़ चिरोली में भी ऐसे मामलों की संख्या भयावह है।

भंडारा जिले में वर्ष भर में बाल मृत्यु का आंकड़ा 496 है तो चंद्रपुर में अप्रैल 2004 से लेकर जून तक 17 बच्चे मर चुके हैं। यवतमाल के पांढर कवड़ा में 6,098 बच्चे कुपोषण के शिकार हैं।

प्रश्न यह उठता है कि क्या कारण है कि जनजातियों की स्थिति इतनी भयावह है।

भारतीय संविधान में 560 जनजातियों का उल्लेख है जो विभिन्न राज्यों के ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों में निवास करती हैं।

भारत में सर्वाधिक जनजातीय जनसंख्या मध्य प्रदेश में तथा सबसे कम सिक्किम में है। यद्यपि जनजातियों की प्रमुख समस्याओं को लेकर समय–समय संविधान निर्माताओं, सरकार, शिक्षण संस्थाओं एवं बुद्धिजीवियों द्वारा प्रयास किए गए परंतु उसमें सफलता अंश मात्र ही मिल पाई हो ऐसा कहना संभव नहीं है।

भारत का संविधान जनजातियों एवं पिछड़े वर्ग के उत्थान के लिए आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास मान्यता एवं धर्म की स्वतंत्रता और प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता का आश्वासन देता है।

संविधान में जनजातियों के लिए दो प्रकार की व्यवस्था की गई है संरक्षी एवं विकासी। संरक्षी प्रावधानों का उद्देश्य उन्हें प्रगति के अवसर प्रदान करना है।

- संविधान के बारहवें भाग के 275 अनुच्छेद के अनुसार, केंद्रीय सरकार राज्यों को जनजातीय कल्याण एवं उनके उचित प्रशासन के लिए विशेष धनराशि देगी।
- पंद्रहवें भाग के 325 अनुच्छेद में कहा गया है कि किसी को भी धर्म, प्रजाति, जाति एवं लिंग के आधार पर मताधिकार से वंचित किया जाएगा।
- 335वां अनुच्छेद आश्वासन देता है कि सरकार नौकरियों में इनके लिए स्थान सुरक्षित रखेगी।
- पांचवी अनुसूची में जनजातीय सलाहकार परिषद की नियुक्ति की व्यवस्था है जिसमें अधिकतम बीस सदस्य हो सकते हैं।
- अनुच्छेद 324 एवं 224 में राज्यपालों को जनजातियों के संदर्भ में विशेषाधिकार प्रदान किए गए हैं।

आदिवासियों के कल्याण के लिए तमाम सरकारी योजनाओं के बावजूद उनकी हालत क्यों दयनीय बनी हुई है यह एक विचारणीय प्रश्न है। इस मद में दिया जाने वाला पैसा पूरी तरह खर्च नहीं हो पा रहा है और आरक्षण के बावजूद सरकारी नौकरियां इनकी पहुंच से दूर हैं।

आवश्यकता इस बात की है आदिवासियों की मूलभूत समस्याओं को केंद्र बिंदु बना कर ही योजनाएं बनाई जाएं और इससे भी कहीं महत्वपूर्ण हैं कि उन योजनाओं पर कठोरता से अमल भी किया जाए।

आदिम जनजाति भुखमरी, कुपोषण, गरीबी, अशिक्षा और पिछड़ेपन के जिस कुचक्र में फंसी हुई है उससे तो प्रबल राजनीतिक इच्छाशक्ति ही उन्हें निकाल सकती है। आदिवासियों की कल्याणकारी नीतियों में आर्थिक हितों को प्रमुखता दी जानी चाहिए क्योंकि गरीबी ही अनेक बुराइयों की जड़ है और इसके लिए सर्वप्रथम आवश्यकता है कि उन्हें उनकी जड़ों से जोड़ा रखा जाए। आदिवासी परिवारों के लिए कृषि हेतु पर्याप्त भूमि की व्यवस्था केंद्र एवं राज्य सरकार का प्रथम प्रयास होना चाहिए। उन्हें बैल, बीज एवं नवीन यंत्रों तथा कुंए आदि खोदने के लिए कम ब्याज पर ऋण की सुविधा दी जाए, घरेलू उद्योग–धंधों का विकास किया जाए, तथा सहकारी समितियों की स्थापना की जाए।

आदिवासियों की दूसरी समस्या जिसका निवारण अतिशीघ्र होना आवश्यक है वह है उनकी स्वास्थ्य संबंधी समस्या जिसके लिए जरूरी है कि आदिवासी क्षेत्रों में चिकित्सालय, डाक्टर एवं आधुनिक दवाइयों का प्रबंध किया जाए। आदिवासी क्षेत्रों में समय–समय पर स्वास्थ्य शिविर लगाए जाएं। चलते–फिरते अस्पतालों की व्यवस्था की जाए जिनकी पहुंच दुर्गम स्थलों तक हो।

शिक्षा एक ऐसा द्वार है जो न केवल आत्मनिर्भरता का मार्ग खोलेगा बल्कि अंधविश्वासों से भी मुक्ति दिलाने में सहायता करेगा। अतः जनजातियों के लिए सामान्य शिक्षा एवं प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाए। शिक्षा का माध्यम प्रादेशिक भाषा हो यह जरूरी है क्योंकि मातृभाषा की शिक्षा में रुचि जाग्रत करने का माध्यम बन सकेगी।

आदिवासियों के सुधार के पीछे हमारा ध्येय उन्हें आधुनिक समाज की प्रतिलिपि बनाना न होकर उनकी व्यक्तिगत विशेषताओं को बनाए रखते हुए उनके विकास के मार्ग को प्रशस्त करना होना चाहिए। ❑

(लेखिका दयानंद विद्यालय, अजमेर में 'समाजशास्त्र' की प्रवक्ता हैं)

ग्रामीण वृद्धों का ठहरता जीवन

आर. बी. एल. गर्ग

मानव जीवनरेखा, जिसकी जन्म और मृत्यु के दो सिरों द्वारा किलेबंदी होती है, में विकास की विशिष्ट अवस्थाएं देखी जाती है यथा–शिशुत्व, बालपन, किशोरावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था तथा वृद्धावस्था। वृद्धावस्था को दूसरा बालपन भी कहा गया है अर्थात जन्म मृत्यु का अग्रदूत। सामान्यतः वृद्धावस्था को कोई भी सहज रूप से स्वीकारना नहीं चाहता, जो जीवन की अनिवार्यता है। वह शाश्वत यौवन के सपनों में खोये रहना चाहता है जो यथार्थ से परे है। वृद्धावस्था एक नकारात्मक सामाजिक वास्तविकता है जिसके इर्दगिर्द उस व्यक्ति को रहना पड़ता है। बढ़ी हुई उम्र की दृष्टि से देखा जाए या सकारात्मक दृष्टि से वृद्ध व्यक्ति को परिवार व समाज के साथ समायोजन करना पड़ता है। सभी रंगों में सफेद रंग सबसे अधिक कठोर होता है। यह रंग उस समय दिखता है जब वृद्ध व्यक्ति यह सोचना आरंभ कर देता है कि अब कुछ नहीं बदलेगा। जो कुछ बदलता है वह कष्टदायी होता है। जीवनसाथी साथ छोड़ देता है और बच्चे अपने वायदों को तोड़ने में देरी नहीं करते।

भारत में चिकित्सा सुविधाओं के निरंतर विस्तार तथा जीवनस्तर में सकारात्मक परिवर्तन के फलस्वरूप जीवन–प्रत्याशा में सुधार हुआ है जो आश्चर्यजनक रूप से जनसंख्या वृद्धि की दर से भी अधिक है। जनांकिकी विशेषज्ञों का अनुमान है कि अगले 45 वर्षों में अर्थात 2050 तक भारत में 60 वर्ष से अधिक आयु वाले व्यक्तियों की संख्या 30 करोड़ को पार कर जायेगी तब ग्रामीण वृद्धों की जनसंख्या 15 करोड़ से उपर पहुंच चुकी होगी। दूसरे शब्दों में कहें तो तब तक भारत के वृद्धजन पूरे यूरोप की जनसंख्या के बराबर हो जाएंगे। फिलहाल 1.2 अरब कुल भारतीय जनसंख्या पर 7 प्रतिशत 60 वर्ष से अधिक वृद्धों की है। भारत में ग्रामीण वृद्धों की परिवार में स्थिति, परिजन का उनके साथ व्यवहार, उनके मनोभाव आदि को लेकर कोई विशिष्ट अध्ययन तो नहीं हुआ, लेकिन एक राष्ट्रीय स्वयंसेवी संगठन – 'एज–केयर' (Age-Care) जिसका उदय वृद्धों के अभिभावक के रूप में हुआ है, द्वारा कुछ समय पहले किए एक अध्ययन से पता चलता है कि "शहरी वृद्ध मात्र बहिष्कृत प्राणी बनकर रह गए हैं। वे स्वयं उनकी संतति द्वारा एकाकी कर दिए गए हैं और धीरे–धीरे यह प्रक्रिया गांव तक भी पहुंच गई है। उन्हें समाज पर मात्र बोझ माना जाने लगा है।" एक जमाना था जब परिवार के वृद्ध को न केवल परिवार द्वारा अपितु पूरे गांव द्वारा सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था तब वृद्ध साठ वर्ष पार करते ही कार्यमुक्त नहीं होते थे लेकिन उनका कार्य 'निगरानी' या 'प्रबंध संबंधी' अधिक था, शारीरिक कम। परिवार के लिए क्या खरीददारी करनी है? शादी पर कितना व्यय करना है? इसका फैसला परिवार का वृद्ध मुखिया करता था। ऐसा नहीं था तब परिवार में झगड़े नहीं होते थे लेकिन सामान्य रूप से वृद्धजन ही उन्हें निपटा देते थे। परिवार में उनके फैसले अंतिम फैसले होते थे और उनकी पसंद अंतिम पसंद। यह सब अधिनायक की शैली में नहीं अपितु पारस्परिक स्नेहपूर्ण संबंधों के कारण संभव था। जब परिवार में किसी वृद्ध की मृत्यु हो जाती थी तो परिवार के सबसे बड़े बेटे को ऐसा लगता था जैसे उस पर भी दुनिया भर का बोझ आ गया हो। 60 वर्ष से ऊपर पुरुष का दर्जा 'बाबा' या 'दादा' व महिला का दर्जा 'दादी' या 'अम्मा' का हो जाता था जिसके पैर छूकर कोई भी दीर्घायु के आशीष का अधिकारी हो जाता था।

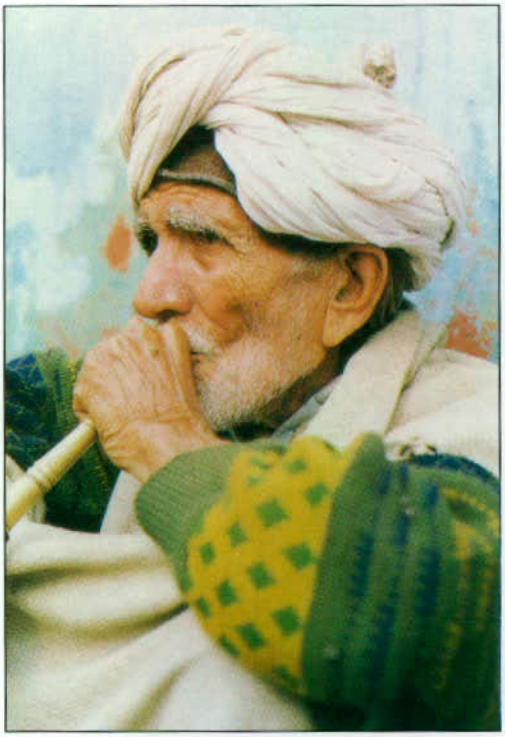

धीरे–धीरे गांव में भी सब कुछ बदल रहा है। मुटठी भर अपवादों की बात नहीं है जहां वृद्ध व बेटा पोते के बीच संबंध अच्छे हैं, जहां वृद्ध मां–बाप में अपने पारिवारिक अस्तित्व को बनाए रखा है। उपभोक्तावादी संस्कृति, कृषि भूमि के विभक्तीकरण, एकाकी रहने के चाह, बढ़ती हुई जीवन यापन लागत आदि में न केवल प्रछन्न ग्रामीण परिवारों के टुकड़े–टुकड़े कर दिए अपितु वृद्धों को असहाय बना दिया है। ग्रामीण वृद्धों की पारिवारिक स्थिति मूकदर्शक की तरह रह गई है जहां अब वे फैसले नहीं करते अपितु फैसले सुनते हैं। अब उन्हें अपने पूर्वजों जैसा सम्मान की बात तो दूर उन्हें अपने जीवन का अस्तित्व भी सुरक्षित नजर नहीं आ रहा। अनेक मामलों में वृद्ध मां–बाप अकेले ही गांव में रह रहे हैं क्योंकि उनके बेटों ने नौकरी के कारण शहरों की ओर पलायन कर लिया और बेटियों की शादी हो गई। सबसे अधिक दुखी वे हैं जिन्होंने अपने जीवन संगी को खो दिया है वे स्वयं अशक्त हो गए हैं।

वृद्धावस्था का स्वास्थ्य परिदृश्य

वृद्धावस्था एक ऐसी आयु है जहां अशक्तता या प्रतिरक्षा प्रणाली के दुर्बल हो जाने के कारण अनेकानेक रोगों की संभावनाएं बन

जाती हैं, तथा चक्षु रोग (मोतियाबिंद/ग्लूकोमा आदि) अस्थि दुर्बलता (आस्टियोपोरोसिस) गठिया (आस्टियोआर्थराइटिस), उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मनोभ्रंश (सठियाजाना या अलजाइमर्स) आदि। 50 परिवारों के एक स्थानीय सर्वेक्षण के अनुसार ग्रामीण वृद्ध चक्षु रोग, गठिया व मनोभ्रंश से सर्वाधिक प्रभावित पाए गए, यद्यपि धीरे–धीरे शहरी सभ्यता के रोग भी (उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, दमा, मधुमेह आदि) उन्हें जकड़ने लगे हैं। इस अध्ययन के अनुसार ऐसी वृद्धा या वृद्ध जिन्होंने अपने जीवन साथी को खो दिया है और जिनके बेटे नौकरी के लिए बाहर चले गए हैं या उनके प्रति बेखबर हो गए हैं, सबसे अधिक दयनीय स्थिति में हैं।

सामाजिक सुरक्षा व वृद्धजन

भारत के नीति निमार्ता यह मानकर चल रहे हैं कि वृद्ध परिजन की सामाजिक सुरक्षा का दायित्व सरकार का कम और परिवार का अधिक है। उनका सोचना है कि वृद्धावस्था मूलतः पश्चिमी देशों की समस्या है। इसलिए हमारी स्वास्थ्य नीतियों में शिशु व मातृत्व कल्याण को प्रधानता दी गई है तथा वृद्धों की सामाजिक सुरक्षा के दृष्टि से उतना नहीं किया गया जितना की बदलती परिस्थितियों में अपेक्षित है। एक वृद्ध ग्रामीण के लिए आयकर में छूट या वरिष्ठ नागरिक के विशेषाधिकार (रियायती रेल भाड़ा आदि) का कोई अर्थ नहीं है। आर्थिक लाभ के रूप में दी जाने वाली पेंशन भी इतनी कम है कि उससे असहाय वृद्ध को अपेक्षित राहत नहीं मिलती। यदि व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाए तो अत्यधिक आर्थिक लाभ के रूप में वृद्धों को प्रत्यक्ष रूप से दी जाने वाली सरकारी सहायता संभव ही नहीं है। लेकिन इस दिशा में सरकार को अन्य कारगर कदम उठाने होंगे– जैसे, प्रोविडेंट फंड या वृद्धावस्था बीमा योजना व वृद्धों की देखभाल करने वाले परिवारों को खाद्य सब्सिडी।

वृद्धों को निर्देश

वृद्धावस्था ऐसी स्थिति होती है जिसमें युवावस्था में पल्लवित अहम अब तृप्त नहीं हो पाता। युवावस्था – जब उसके पास दर्जनों मित्र, स्वयं के परिवारजन, रिश्तेदार व बच्चे उसे प्यार करते हैं और उसके इर्दगिर्द बने रहते हैं और जो वृद्धावस्था तक पहुंचने तक उससे दूर हो जाते हैं और जब वह अनचाहा, उपेक्षित और कभी–कभी उपहासित भी महसूस करता है कोई उसका साथ देना पसंद नहीं करता और तब वह महसूस करता है कि वृद्धावस्था ने उसे दीन–हीन बना दिया है। युवावस्था के अहम की तृप्ति में विफलता के कारण ऐसा वृद्ध अपने परिवारजनों की बीच चिड़चिड़ा, आक्रामक, आलोचक, झगड़ालू, शंकालू व वाचाल बन जाता है। बहुत ही कम ऐसे भाग्यशाली वृद्ध हैं जो अपने शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य के बल पर युवाकाल जैसी लोच बनाये रखते हुए परिवार व समाज के साथ अपने अर्थपूर्ण संबंधों का क्षय नहीं होने देते। वृद्धावस्था जीवन का अंतिम व सबसे महत्वपूर्ण पड़ाव है जिसे सार्थक बनाने के लिए वृद्धावस्था में प्रवेश से पूर्व कुछ तैयारियां आवश्यक हैं, जो इस प्रकार हैं :

- **स्वास्थ्य संबंधी सावधानियां:** खानपान, व्यायाम, व औषधि सेवन में नियमितता परम आवश्यक है। सवेरे की नियमित सैर, जब खेत आक्सीजन से भरे होते हैं, वृद्धों के लिए श्रेष्ठ व्यायाम है।
- **स्वयं के स्थाई आय के स्रोतों का आकलन तथा नियमित बचत:** कुछ जरा विज्ञानी तो यह भी सलाह देते है कि वृद्ध अपनी नियमित आय के स्रोत के क्षय न होने दें।
- **वृद्धों को बेटे, पोते–पोतियों से न्यूनतम अपेक्षाएं:** क्योंकि अत्यधिक अपेक्षाएं तनावकारक होते हैं, खास तौर से जब वे पूरी नहीं होती।
- **वृद्धों को पारिवारिक मामलों में अनावश्यक–अत्यधिक हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए:** 'तुम्हें यह करना चाहिए,' 'उन्हें यह नहीं करना चाहिए' तनाव को जन्म दे सकता है यह न तो वृद्ध की दृष्टि से और न पारिवारिक दृष्टि से ही उचित है।
- **सकारात्मक सोच:** यह न केवल जीवन की गुणवत्ता को सुधारता है अपितु दीर्घायु भी करता है। बात–बात पर क्रोध, एकाकीपन, वैमनस्यता, मोह, घृणा, हमारी जीवी का सर्वनाश करते हैं जिसके कारण मनः शारीरिक व्याधियां जन्म लेती है। यह मात्र धार्मिक उद्देश्य नहीं है अपितु शोधपरक तथ्य है।
- **ईश वंदना:** भजन, कीर्तन, सत्संग हमेशा ही मन व शरीर के स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हैं, जिन्हें समवय मित्रों के सहयोग से गांव की चौपाल पर आयोजित किया जा सकता है। यदि आपत्तिकारक न हो तो अन्य परिवारजन के सहयोग से यह घर में भी किया जा सकता है।

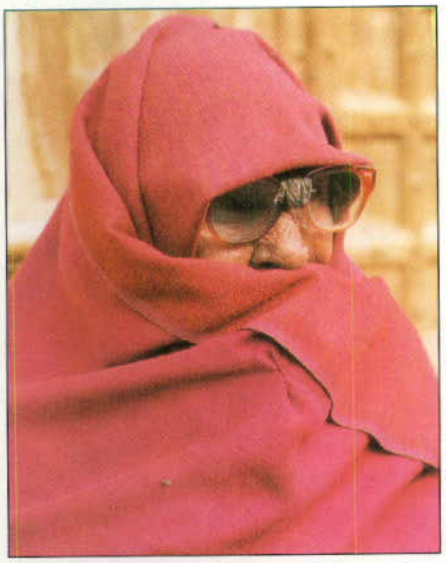

- **यथासंभव पारिवारिक कार्यों के सहयोग:** अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए ही नहीं अपितु स्वयं को अर्थपूर्ण रूप से प्रयोग करने व व्यस्त रखने के लिए भी यह आवश्यक है। ऐसा करते समय आनंद का अनुभव होना चाहिए। बच्चों के साथ स्नेहपूर्ण बिताए गए क्षण आनंद का स्रोत बन सकते हैं।

वृद्धावस्था जीवन की अंतिम स्थिति अवश्य है लेकिन इसे सार्थक व उपयोगी बनाया जा सकता है। यह तय है कि वृद्धावस्था को उल्टा नहीं जा सकता लेकिन सकारात्मक नियोजन द्वारा काफी समय तक के लिए इसे आगे किया जा सकता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि अधेड़ पूरी तैयारी के साथ सरकारी सहायता की अपेक्षा के बिना वृद्धावस्था में प्रवेश करें, वृद्ध होकर शिष्टतापूर्ण जीने की कला सहज नहीं है। लावण्यपूर्ण वृद्धावस्था के लिए जीवन पर्यन्त अर्जित किया गया समर्पण, अनुशासन, सम्यक विचार व सम्यक जीवन की आवश्यकता है। संयुक्त राष्ट्र के हाल के एक अध्ययन के अनुसार दुनिया भर में शहरी क्षेत्रों का विस्तार इतनी तेजी से हो रहा है कि 2010 तक अधिकांश विश्व शहरों में रह रहा होगा। जाहिर है तब तक अधिकांश भारतीय ग्रामीण वृद्ध शहरों का हिस्सा बन जाएंगें। परिवर्तन की इस प्रक्रिया में शहरों में उनकी स्थिति क्या होगी यह कहना मुश्किल है, लेकिन तब स्वंय शहरों के हालात बहुत अच्छे नहीं होगे क्योंकि तब पानी, बिजली, चिकित्सा सुविधाओं आदि का भार बढ़ जाएगा। अतः यह आवश्यक है कि वृद्धावस्था का नियोजन किया जाए। ❑

(लेखक सेवानिवृत्त प्रोफेसर हैं)

वृद्ध नागरिकों की समस्याएं और कल्याणकारी योजनाएं

डा. राजमणि त्रिपाठी

विज्ञान और चिकित्सा के क्षेत्र में हुई प्रगति के कारण मानव जीवन की आयु में निरंतर वृद्धि हुई है। आज लोगों की औसत आयु 62 वर्ष से अधिक है, जबकि दो दशक पूर्व यह केवल 54 वर्ष और स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व 32 वर्ष के लगभग थी। विकसित तथा विकासशील देशों में वृद्ध नागरिकों की जनसंख्या और सकल जनसंख्या में उनका अनुपात निरंतर बढ़ रहा है। इस वृद्धि के साथ–साथ आज उनकी नई–नई समस्याएं भी पैदा होती जा रही हैं जिनके समाधान हेतु प्रभावी मानदंड की खोज निरंतर जारी है। भारत में भी इस समस्या की गंभीरता पर चिंता व्यक्त की गई है। वर्तमान समय में वृद्ध नागरिकों को बल प्रदान करने हेतु बनाई गई विभिन्न योजनाएं अपर्याप्त हैं। विश्व के अधिकांश देशों विशेषतया विकासशील देशों में कई हजार वृद्ध जन आज भी परिवार तथा समाज द्वारा उपेक्षित हैं जिसके कारण उनका जीवन बोझ बना हुआ है। इसलिए वर्तमान और भविष्य में वृद्ध नागरिकों की संभावित वृद्धि हेतु वित्तीय, शारीरिक, भौतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक और मनोवैज्ञानिक समस्याएं जो मुख्य रूप से वृद्ध नागरिकों से जुड़ी हैं उनके समाधान हेतु विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

वृद्ध जनसंख्या परिदृश्य

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा जारी एक ताजा रिपोर्ट के अनुसार यूरोप दुनिया का सबसे बूढ़ा देश है जहां वृद्धों की जनसंख्या, कुल जनसंख्या का पांचवा भाग है। सन् 2020 में भी यूरोप अपनी इसी अपनी इसी पुरानी स्थिति में होगा, क्योंकि तब तक यूरोप में वृद्धों की संख्या कोई 25 प्रतिशत होगी।

फोटो : सर्वेश

फोटो : ओम मिश्रा

उत्तरी अमेरिका, पूर्वी एशिया, लैटिन अमेरिका और दक्षिणी एशिया में वृद्धों की संख्या क्रमशः 23, 17, 12 और 10 प्रतिशत होने का अनुमान है। जहां तक अन्य देशों का प्रश्न है, सन् 2020 में जापान 31 प्रतिशत वृद्धों के साथ विश्व का सबसे बूढ़ा देश होगा। इसके बाद इटली, ग्रीस और स्विटजरलैंड का स्थान होगा, जहां वृद्धों की संख्या 28 प्रतिशत से अधिक होने का अनुमान है। विश्व के शीर्ष के दस बूढ़े देशों में पांच विकासशील देश होंगे। उदाहरणस्वरूप चीन 23 करोड़, भारत 14 करोड़ 20 लाख, इंडोनेशिया 2 करोड़ 90 लाख, ब्राजील 2 करोड़ 70 लाख और पाकिस्तान 9 करोड़ 80 लाख, कोलम्बिया, मलेशिया, केन्या, थाईलैंड और घाना जैसे विकासशील देशों में सन् 1990 से 2025 के बीच वृद्धों की संख्या बढ़ने की दर विकसित देशों की अपेक्षा सात–आठ गुनी अधिक होगी। इस कारण विकासशील देशों में मात्र 35 वर्षों के अंतराल पर ही वृद्ध की संख्या 200 से 300 प्रतिशत तक बढ़ सकती है। इसी भांति फ्रांस में वृद्धों की संख्या 7 से 17 प्रतिशत होने में 115 वर्ष सन् 1865 से 1980 के बीच लगे थे। अनुमान है कि चीन में वृद्धों की संख्या 10 से 20 प्रतिशत होने में केवल 27 वर्ष (सन् 2000 से 2027) लगेंगे। वृद्धों में भी महावृद्धों (80 वर्ष से अधिक आयु के) की संख्या भी तीव्र गति से बढ़ रही है। सन् 2020 में कुल वृद्ध की भागीदारी ग्रीस और इटली में 22 प्रतिशत, जापान, फ्रांस और स्पेन में 21 प्रतिशत तथा जर्मनी में 20 प्रतिशत होगी। अनेक विकासशील देशों में महावृद्धों की भागीदारी 15 से 20 प्रतिशत तक हो सकती है जिसका मुख्य कारण यह है कि विकासशील देशों में औसत आयु तेजी से बढ़ रही है। इस समय 20 विकासशील देश ऐसे

हैं जहां औसत आयु 72 वर्ष से अधिक है।

विश्व के इस गंभीर परिदृश्य की तुलना में भारत की स्थिति और भी चिंतनीय है, कारण यह है कि हमारे यहां जनसंख्या की अति वृद्धि के साथ–साथ वृद्धों की जनसंख्या तीव्र गति से बढ़ती जा रही है। सन् 1961 की जनगणना के अनुसार भारत में वृद्ध नागरिकों की जनसंख्या लगभग 5.63 प्रतिशत थी जो 1971 में बढ़कर 5.97 प्रतिशत, 1981 में 6.28 प्रतिशत, 1991 में 6.58 प्रतिशत तथा 2001 में 7.08 प्रतिशत हो गई। परंतु पिछले कुछ वर्षों में यह जनसंख्या जिस तीव्र गति से बढ़ रही है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि सन् 2011 तक 8.18 प्रतिशत तथा 2021 तक 9.97 प्रतिशत तक हो जाएगी। सन् 2001 जनगणना के अनुसार विभिन्न भारतीय राज्यों तथा केंद्र शासित प्रदेशों में वृद्ध नागरिकों की सबसे अधिकतम जनसंख्या 9.49 प्रतिशत केरल में थी। जबकि तमिलनाडु (9.09 प्रतिशत), गोवा में (8.17 प्रतिशत), महाराष्ट्र में (7.91 प्रतिशत), पांडिचेरी में (7.83 प्रतिशत) तथा आंध्र प्रदेश में (7.69 प्रतिशत) थी जबकि सबसे न्यूनतम वृद्ध नागरिकों की जनसंख्या (4.74 प्रतिशत) मेघालय में पाई गई। 2011 तक भारत के कुछ ही राज्यों में वृद्ध नागरिकों की जनसंख्या 10 प्रतिशत से ऊपर पहुंच जाने की संभावना व्यक्त की गई है जबकि 2021 में केरल, गोवा, तमिलनाडु, चंडीगढ़, पांडिचेरी और अंडमान निकोबार से यह वृद्धि 12 प्रतिशत से ऊपर पहुंच जाने का अनुमान है तथा उत्तर प्रदेश में 1.9 करोड़, महाराष्ट्र में 1.4 करोड़, बिहार में 1.3 करोड़ वृद्ध नागरिकों की जनसंख्या का अनुमान है। इसी प्रकार भारत में कुल वृद्ध नागरिकों की जनसंख्या 13.6 करोड़ का अनुमान है, जबकि वर्तमान वृद्ध नागरिकों की कुल जनसंख्या 5.6 करोड़ है। इस प्रकार यदि कहा जाय कि भविष्य में 'भारत बूढ़ों का देश' होगा तो अतिशयोक्ति न होगी। जिस तीव्र गति से भारत में वृद्ध नागरिकों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ रही है उस अनुपात में उनकी देखभाल नहीं हो पा रही है।

वृद्धि के कारण

सन 1951 के दशक में चेचक जैसी भयंकर बीमारी के अतिरिक्त मलेरिया, टाइफाइड, हैजा, निमोनिया और यहां तक कि पेचिश भी जानलेवा बीमारी थी। एक हजार में से लगभग 200 बच्चों की किसी न किसी ऐसी बीमारी से मृत्यु हो जाती थी। सन 1970 के दशक में चलाए गए विश्वव्यापी चेचक उन्मूलन कार्यक्रम के प्रभाव के फलस्वरूव देश में संक्रामक रोगों का प्रकोप कम हो गया तथा इसी प्रकार अनेक कारगर दवाओं के आविष्कार के चलते अन्य सारी जानलेवा बीमारियों को समूल नष्ट करने में सहयोग प्रदान किया। इससे सभी आयु वर्गों में मृत्यु दर तीव्र गति से घट गई और औसत आयु बढ़ गई। परंतु मृत्यु दर में होने वाली कमी के अनुपात में जन्मदर में कमी नहीं आई। परिणामस्वरूप कुल जनसंख्या तीव्रगति से बढ़ने के बाद जनसंख्या के मूल स्वरूप में भी परिवर्तन के खास लक्षण परिलक्षित नहीं हुए। जहां पूर्व में यानी जनसंख्या में बच्चों व किशोरों की संख्या सबसे अधिक रही और वृद्धों की संख्या सबसे कम वहीं सन 1980 के दशक में परिवार नियोजन के कार्यक्रमों का प्रभाव परिलक्षित होने के बाद से जन्म दर तीव्र गति से घटने लगी। परिणामस्वरूप कुल जनसंख्या में बच्चों व किशोरों की संख्या निरंतर घट रही है जबकि वृद्ध नागरिकों की संख्या अप्रत्याशित रूप से बढ़ती जा रही है। अनुमान है कि सन 2010 से 2050 के बीच भारत में वृद्धों की जनसंख्या बढ़कर इतनी अधिक हो जाएगी कि उन्हें संभालना कठिन कार्य होगा।

मुख्य समस्याएं

सामाजिक–आर्थिक समस्याएं

वृद्ध नागरिकों की बढ़ती जनसंख्या अनेक समस्याओं के कारण देश के नियोजकों और नीति निर्धारकों के समक्ष परेशानी खड़ी कर दी है। सबसे बड़ी समस्या इनको सामाजिक आर्थिक सहारा देने की है। वृद्धावस्था में प्रायः आर्थिक समस्याएं भी वृद्ध नागरिकों को परेशानी में डाल देती है। नौकरी करने वाले व्यक्ति जैसे ही 60 वर्ष की आयु पार करते है इनकी आय अचानक पेंशन के रूप में आधी रह जाती है या बिल्कुल बंद हो जाती है। ऐसे में उन्हें अपने नियमित खर्च में कटौती करनी पड़ती है या आय की कोई अन्य व्यवस्था करनी पड़ती है। यदि उस आयु में व्यक्ति के ऊपर पारिवारिक उत्तरदायित्व भी हुआ तो स्थिति और भी अधिक खराब होती है। प्रायः देखने में आता है कि ऐसी कठिन परिस्थिति में अपने पैरों पर खड़ी संतान, पिता का हाथ बटाने की जगह उनसे मुंह मोड़ लेती है। कुल मिलाकर वृद्ध व्यक्ति अपनी तमाम सारी शारीरिक व मानसिक कमजोरियों के साथ घर–गृहस्थी का बोझ अपने सिर पर ढोने के लिए मजबूर होते हैं। इस सारी सामाजिक आर्थिक समस्याओं से जूझता वृद्ध व्यक्ति वृद्धावस्था से जुड़े अनेक रोगों व विकारों की चपेट में भी आ जाता है। अनेक अध्ययन तथा सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि आधे से अधिक वृद्ध व्यक्ति सक्रिय तथा स्वतंत्र जिदगी जीने में असमर्थ हैं।

स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं

विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा अनेक सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि लगभग 50 प्रतिशत से अधिक वृद्ध व्यक्ति सक्रिय तथा स्वतंत्र जिंदगी जीने में असमर्थ हैं जिसके कारण अनेक हैं। जिसमें गठिया और जोड़ों का दर्द वृद्धावस्था की एक मुख्य समस्या है। इस बीमारी से ग्रस्त वृद्ध चलने–फिरने में मजबूर हो जाते हैं। मोतिया बिंद और आंख के रोगों के कारण कमजोर हुई नजर भी एक बड़ी बाधा बन जाती है। वृद्धावस्था से श्रवण–शक्ति घट जाने के कारण उन्हें सुनाई भी कम देने लगता है। इसके अतिरिक्त उच्च रक्तचाप, सांस के रोग, मधुमेह, दिल के रोग, गुर्दे की गड़बड़ी आदि भी वृद्धावस्था के मुख्य रोग हैं।

प्रायः ऐसा देखा गया है कि 60 वर्ष से अधिक आयु के वृद्धों में दिल का रोग किसी न किसी रूप में मौजूद होता है। परंतु ग्रामीण अंचल में रहने वाले वृद्धों में इस बीमारी का प्रकोप कम होता है। वृद्धों को अधिक सताने वाले रोगों में सांस और फेफड़े संबंधी रोग मुख्य हैं। पुरानी ब्रांकाइटिस और दमा के अतिरिक्त तपेदिक भी वृद्धावस्था का एक प्रमुख रोग बनता जा रहा है। किसी भी खास रोग के न होने पर भी वृद्धों को पूरी तरह स्वस्थ्य नहीं रखा जा सकता। देश के ग्रामीण क्षेत्रों में किए गए एक सर्वेक्षण से पता चला है कि लगभग 70 प्रतिशत वृद्ध रक्त की कमी, विटामिनों की कमी या अन्य पोषक तत्वों के अभाव में ग्रस्त होते हैं। उन्हें संतुलित आहार नहीं मिल पाता जिसके कारण उन्हें प्रतिदिन 2400 कैलोरी ऊर्जा नहीं मिल पाती। विशेषज्ञ बताते हैं कि ऐसा मुख्य रूप से भूख कम लगने, भोजन में स्वाद न आने, पाचन–शक्ति

कमजोर होने और दांत कमजोर होने के कारण होता है। इसके अतिरिक्त वृद्धावस्था में बच्चों की भांति भोजन की पसंदगी न पसंदगी की इच्छा भी प्रबल हो जाती है जो अंत में कुपोषण का कारण बन जाती है। किंतु भारत में वृद्धावस्था के कुपोषण को गंभीर समस्या नहीं माना जाता है।

अभी भी हमारे देश में चिकित्सा के क्षेत्र में वृद्धावस्था पूरी तरह उपेक्षित है। वृद्धावस्था में संबंधित विभिन्न बीमारियों और उनके निराकरण से संबंधित पक्षों पर बहुत शोध हुए हैं। अस्पतालों में वृद्धों से जुड़े रोगों व बीमारियों के लिए अलग विभाग नहीं हैं जबकि पश्चिमी देशों के मेडिकल कालेजों में ही वृद्धावस्था चिकित्सा के लिए एक अलग विभाग की व्यवस्था है। हमारे देश में अभी अस्पतालों में वृद्धों की देखरेख के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित कर्मचारी नहीं हैं। इससे प्रायः वृद्ध रोगी बीमारियों के साथ–साथ कई अन्य परेशानियों से भी घिर जाते हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अपनी रिपोर्ट में अनुमान लगाया है कि सन 2020 में भारत जैसे विकासशील देशों में होने वाली कुल मौतों में से तीन चौथाई मौतें वृद्धावस्था से संबंधित बीमारियों से होंगी। शारीरिक बीमारियों के अतिरिक्त वृद्धावस्था कई अन्य प्रकार के मानसिक विकारों को उत्पन्न करता है। डिप्रेशन बुढ़ापे का सबसे प्रमुख मानसिक रोग है।

देखरेख की समस्याएं

उम्र के आखिरी क्षण पर जहां वृद्धों को घर–परिवार अपने के प्यार व सहारे की नितांत आवश्यकता होती है, ऐसे में उनकी उपेक्षा और तिरस्कार उनके शेष जीवन को बोझ बना देता है। इस स्थिति में जहां कई वृद्ध अपने की घर में उपेक्षित जीवन जीने के लिए मजबूर होते हैं वहीं बहुत से वृद्ध वृद्धाश्रमों में अपनों के होते हुए भी उचित देखभाल एवं सहारे की लालसा से अपना शेष जीवन व्यतीत करते हैं। ऐसे में प्रश्न उठता है कि इन वृद्धों की देखभाल का उत्तरदायित्व आखिर किसका है और वह भी ऐसे समय में जब वृद्धों के प्रति उदासीनता निरंतर बढ़ती जा रही हो। वास्तव में एक समय वह था जब पहले वृद्धों का बहुत सम्मान होता था, उनकी जबान से निकला शब्द कानून होता था। परंतु अब उस सम्मान में कमी आ गई है। यद्यपि ग्रामीण परिवेश में आज भी उम्र के साथ–साथ आदर बढ़ता देखा जाता है लेकिन नगरों में तो जैसे वृद्धावस्था के विरोध में एक मौन बगावत प्रारंभ हो गई है। परिवार के बड़ों व वृद्धों को दरकिनार करने की प्रवृत्ति जोर पकड़ रही है। युवा वर्ग अब उन पर हावी होता जा रहा है। संयुक्त परिवारों के विघटन से ही वृद्धों की यह स्थिति नहीं हुई, बल्कि शहरीकरण, मकानों में जगह की तंगी, युवाओं में पलायन करने की भावना, बढ़ता व्यक्तिवाद और अपसंस्कृति का प्रचलन आदि जटिल कारण भी वृद्धों के प्रति उपेक्षा भाव के प्रति जिम्मेदार हैं।

कल्याणकारी योजनाएं

भारत में वृद्ध नागरिकों की तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या हेतु सरकार ने अभी तक कोई प्रभावी कदम नहीं उठाया। किसी भी पंचवर्षीय योजना में वृद्ध नागरिकों को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने हेतु अलग से प्रावधान नहीं किए गए। 1982 में वियना में हुए वृद्धों के विश्व सम्मेलन में भारत ने बढ़ती वृद्ध जनसंख्या पर चिंता व्यक्त करते हुए उससे छुटकारा पाने के लिए वृद्धावस्था के प्रति जागरूकता बढ़ाने की बात दोहराई।

पश्चिमी देशों की नकल कर वृद्धावस्था की संस्कृति हमारे देश में भी पनप तो गई परंतु बहुत बड़े पैमाने पर इसकी कामयाबी में संदेह है। दिल्ली महानगर में ऐसे आश्रमों की संख्या काफी है जिनमें 'संध्या' नामक सरकारी संस्थान, 'आनंद निकेतन', 'वृद्ध आश्रम', 'हेल्पेज इंडिया' तथा 'एज केयर' इंडिया जहां पर अपने एकाकीपन को कम करने या एक घर जैसा माहौल महसूस करने की चाह से अधिकांश वृद्ध विभिन्न स्थानों पर वृद्ध आश्रमों में अपने जीवन के शेष समय व्यतीत करते हैं।

राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन करने वाले निराश्रित व साधनहीन असहाय वृद्धों की आवश्यकताओं की समुचित पूर्ति हेतु भारत सरकार द्वारा चलाया जाने वाला एक केंद्र प्रायोजित कार्यक्रम है जिसके अंतर्गत लगभग 53 लाख से अधिक बुजुर्गों को शामिल किए जाने का लक्ष्य रखा गया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत 175 रुपए पेंशन के रूप में प्रतिमाह सहायता प्रदान की जाती है।

सरकार द्वारा वृद्ध नागरिकों की चिकित्सीय सुविधा देश के कुछ मेडिकल कालेजों में वृद्धावस्था चिकित्सा एक अलग विभाग के रूप में स्थापित किए गए हैं जहां पर नागरिक अपनी चिकित्सा निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही अस्पतालों में वृद्धों की देखभाल के लिए विशेष रूप से पैरा–मेडिकल स्टाफ के प्रशिक्षण की व्यवस्था की गई है। जिससे वृद्धों की बीमारियों के अतिरिक्त अन्य कठिनाइयों की भी जानकारी उपलब्ध हो सके जिसका निदान करने में सुविधा हो। एक विशेष चिकित्सा सुविधा के अंतर्गत प्रत्येक रविवार को 10 बजे से 12 बजे तक वृद्ध नागरिकों हेतु विशेष चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है। साथ ही अपंग या चल–फिर न सकने वाले वृद्धों हेतु, मोबाइल चिकित्सा सुविधा की व्यवस्था की गई है।

वयोवद्ध नागरिकों को रेल व बस टिकटों में 50 प्रतिशत की छूट सरकार की ओर से उपलब्ध कराई गई है जिससे उन्हें अपने बच्चों से मिलने या अन्यत्र आने में कठिनाई न हो सके।

सरकार की ओर से साधन विहीन व आर्थिक दृष्टि से कमजोर वयोवृद्ध नागरिकों को निःशुल्क आवास की सुविधा उपलब्ध है। देश के विभिन्न नगरों व गांवों में यह सुविधा विशेषरूप से प्रभावी दिखाई पड़ रही है।

सरकार द्वारा वृद्ध नागरिकों को आर्थिक प्रदान करने हेतु भारतीय जीवन बीमा निगम द्वारा अनेक प्रकार की पेंशन योजना चालू की गई है जिसका लाभ लोगों को मिल रहा है।

राष्ट्रीय बैंकों में वृद्ध नागरिकों के बचत खाते में जमा धनराशि पर एक प्रतिशत अधिक ब्याज देने का प्रावधान किया गया तथा जमा राशि आय कर से मुक्त रखी गई है।

वृद्ध नागरिकों को सरकार द्वारा टेलीफोन कनेक्शन देने में प्राथमिकता देते हुए टेलीफोन बिल जमा करने हेतु अलग से काउंटर की व्यवस्था की गई है।

पुलिस द्वारा असहाय वद्धों की सुरक्षा हेतु कदम उठाते हुए उन्हें संरक्षण प्रदान किए गए हैं जिससे उनके जान–माल की सुरक्षा हो सके।

इस प्रकार वयोवृद्ध नागरिकों की समस्याओं के निदान हेतु के नगरीय तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सरकार द्वारा अनेक कल्याणकारी योजनाएं संचालित हैं किंतु जागरूकता के अभाव में उनका भरपूर लाभ नहीं उठा पर रहे हैं। ❑

(लेखक गोविंद बल्लभ पंत सामाजिक विज्ञान संस्थान, इलाहाबाद से संबद्ध हैं।)

मानवाधिकार सरंक्षण

नवीन पंत

सभी मनुष्य स्वतंत्र और समान जन्म लेते हैं। उनके अधिकार बराबर होते हैं। सभी में सोचने समझने की शक्ति (तर्क बुद्धि) होती है। सभी की अंतरात्मा उन्हें निर्देश प्रदान करती है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में ही उसका विकास होता है अतः मनुष्य समाज में सबके साथ भाईचारे में रहना चाहता है। लेकिन मनुष्य का स्वार्थ और राजनीतिज्ञों की महत्वाकांक्षा इसमें आड़े आती हैं। सभी मनुष्यों के अधिकार तो बराबर हैं लेकिन सामाजिक और आर्थिक बंधन इन अधिकारों को सीमित कर देते हैं।

फिर स्वतंत्रता असीमित नहीं हो सकती स्वतंत्रता का अर्थ अराजकता नहीं है। स्वतंत्रता अनियंत्रित और पूर्ण नहीं हो सकती 'समाज और राज्य व्यक्ति की स्वतंत्रता पर न्यायसंगत प्रतिबंध लगा सकते हैं। स्वतंत्रता की रक्षा के लिए लगाए जाते हैं। एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति की स्वतंत्रता का हनन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती।

लोग सहिष्णुता, सहअस्तित्व की भावना के साथ ही शांति और भाईचारे में रह सकते हैं। सहिष्णुता का सरल अर्थ है दूसरे के अधिकारों को स्वीकार करना, उन्हें मान्यता प्रदान करना। दूसरों के साथ रहना, उनकी बात सुनना और उनकी बात को समझना सभ्य समाज में रहने की आवश्यक शर्त है।

मनुष्य जाति ने अपनी विकास प्रक्रिया के दौरान सदैव 'जिओ और जीने दो' की भावना का अनुसरण किया है। उसने यह भी स्वीकार किया है कि सभी लोग जाति (नस्ल), रंग, सेक्स (लिंग), भाषा, धर्म, राजनीतिक और राय (मत) संबंधी भेदभाव के बिना कुछ अधिकारों और स्वतंत्रता का उपयोग करने के अधिकारी हैं। इन अधिकारों को मानव अधिकार कहा जाता है। यह माना जाता है कि ये अधिकार प्रकृति अथवा ईश्वर प्रदत्त हैं। इन अधिकारों में शामिल हैं, जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, विवाह करने का अधिकार आदि। ये अधिकार मानव व्यक्तित्व के विकास और सम्मानपूर्ण जीवन बिताने के लिए आवश्यक हैं।

मानव अधिकार निष्पक्षता और न्याय के सिद्धांतों पर आधारित हैं। ये विश्वव्यापी नैतिक अधिकार हैं जो सभी व्यक्तियों को प्राप्त हैं। मानव अधिकारों का विचार नया नहीं है। इसकी जड़ें सभी धर्मों और दर्शन शास्त्रों में पाई जाती हैं। कुछ सभ्यताएं मनुष्य के अधिकारों पर और अन्य कुल, गोत्र, कबीले और समुदाय पर जोर देती हैं। साधारण अंतर के बाद सभी सभ्यताएं, सभी देश कुल बुनियादी मूल्यों के बारे में एकमत हैं। ये मूल्य हैं मानव जीवन और मानव गरिमा का सम्मान।

द्वितीय महायुद्ध के दौरान जन–धन का बड़े पैमाने पर विनाश हुआ। बम वर्षा में हजारों स्त्रियां और बच्चे मारे गए। अस्पताल, स्कूल, पुस्तकालय आदि भी बम वर्षा के शिकार हुए। जर्मनी ने सभी नैतिक नियमों और सुस्थापित मान्यताओं का उल्लंघन करके 60 लाख यहूदियों को मौत के घाट उतारा। जर्मन तानाशाह हिटलर यहूदी जाति का समूल नष्ट करना चाहता था। इस तरह की घटनाओं की पुनरावृत्ति रोकने और मानव अधिकारों की अवधारणा को सुस्थापित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र के सभी भौगोलिक क्षेत्रों और राजनीतिक व्यवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले 14 देशों के प्रतिनिधियों ने 1948 में विश्वव्यापी मानव अधिकारों की घोषणा को स्वरूप प्रदान किया। बाद में इसी वर्ष संयुक्त राष्ट्र ने मानव अधिकारों की घोषणा का स्वीकार कर लिया। विश्व के सभी देशों की जनता और वहां की सरकारों ने इस घोषणा को इस आशा के साथ स्वीकार किया कि इसके बाद जातिनाश जैसे घटनाएं नहीं होंगी। यह घोषणा संपूर्ण मानवता की इच्छाओं–आकांक्षाओं को प्रकट करती है। इस घोषणा में 30 अनुच्छेद हैं, जिनमें मनुष्य को प्रभावित करने वाले सभी नागरिक (सिविल), राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को शामिल किया गया है। इस घोषणा को 10 दिसंबर 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा ने स्वीकार किया। घोषणा के पक्ष में 48 देशों ने मत दिया, 8 देशों ने मतदान में भाग नहीं लिया और इसके विरोध में कोई मत नहीं पड़े।

विश्वव्यापी मानव अधिकारों की घोषणा कोई संधि, समझौता या बाध्यकारी कानूनी दस्तावेज नहीं है। यह केवल एक घोषणा है। सिद्धांतों या इरादों का वक्तव्य है। अब संयुक्त राष्ट्र के लगभग 185 देश इस घोषणा का पालन करते हैं। इसका उपयोग मानव अधिकारों का पालन कराने के लिए एक मानक के रूप में किया जाता है। इसे अनेक देशों ने अपने संविधान में शामिल किया है। अनेक देशों की अदालतें और अंतर्राष्ट्रीय संगठन इसकी शब्दावली और भावना के अनुसार आचरण करते हैं।

विश्वव्यापी मानव अधिकारों की घोषणा को मजबूत बनाने के लिए संयुक्त राष्ट्र ने 1966 में दो अतिरिक्त दस्तावेज जिन्हें समझौते कहा जाता है, स्वीकार किए।

- नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता

- आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता।

ये समझौते इसलिए महत्वपूर्ण हैं क्योंकि जिन देशों ने इन पर हस्ताक्षर किए हैं उन्होंने इनका पालन करने का वचन दिया है और इन्हें अतंर्राष्ट्रीय कानून की हैसियत प्राप्त हो गई है।

महिलाओं के अधिकारों की रक्षा

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 18 दिसंबर 1979 को महिलाओं के विरुद्ध सभी किस्म के भेदभाव समाप्त करने के प्रस्ताव 2 सितंबर 1981 को लागू हो गया। संयुक्त राष्ट्र के लगभग सभी सदस्य देशों ने इसका अनुमोदन कर दिया है। प्रस्ताव के अनुच्छेद 17 के अतंर्गत गठित 23 स्वतंत्र विशेषज्ञों की समिति विभिन्न देशों से प्रस्ताव की व्यवस्थाओं का पालन करने की रिपोर्ट प्राप्त करती है। 1998 से महिलाओं के विरुद्ध हिंसा को भी उनके साथ भेदभाव माना जाता है। समिति सभी देशों से महिलाओं के विरुद्ध हिंसा रोकने के लिए निश्चित उपाय करने को करती है। समिति प्रति वर्ष संयुक्त राष्ट्र महासभा में एक रिपोर्ट पेश करती है।

महिलाओं को अनेक तरह के बंधनों का सामना करना पड़ता है। इनमें से कुछ हैं जबरन विवाह, घरेलू हिंसा, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवा और सार्वजनिक जीवन में प्रवेश के कम अवसर, दहेज हत्या, कन्या भ्रूण की हत्या समान कार्य के लिए समान वेतन न दिया जाना, कार्यस्थल पर महिला होने के कारण परेशान किया जाना और अभाव, गरीबी एवं अज्ञानता के कारण वेश्यावृत्ति में धकेला जाना। समाज विज्ञानियों के मत में सब बुराइयां महिलाओं/कन्याओं के प्रति भेदभाव को समाप्त कर दिया जाए और उन्हें विकास के समान अवसर प्रदान किए जाएं तो ये सभी बुराइयां स्वतः ही दूर हो जाएंगी। महिलाओं को निरापद और स्वस्थ वातावरण में बिना भेदभाव के कार्य करने का पूरा अधिकार है और राज्य को उन्हें यह अधिकार उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक कानून बनाने चाहिए।

महिलाओं के विरुद्ध भेदभाव समाप्त करने और उन्हें बराबरी के अधिकार देने के लिए संयुक्त राष्ट्र ने 1975 (मैक्सिको सिटी), 1980 (कोपेनहेगन), 1985 (नैरोबी) और 1993 (वियेना) में विश्व सम्मेलन आयोजित किए। इन सम्मेलनों की सिफारिशों को कार्यन्वित करने के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 1993 में एक प्रस्ताव पास करके सभी देशों से महिलाओं के विरूद्ध हिंसा रोकने और दोषियों को दंड देने के लिए आवश्यक व्यवस्था करने को कहा। 1995 में बीजिंग में चौथा विश्व महिला सम्मेलन आयोजित किया गया। इस सम्मेलन में महिलाओं को विकास प्रक्रिया में पूरी तरह भागीदार बनाया जाए समाज में उनकी स्थिति सुधारी जाए और उन्हें शिक्षा के अधिक के आधार पर भेदभाव करने की मनाही है। इसके अलावा स्वतंत्रता के बाद महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। इनमें प्रमुख हैं हिंदू महिलाओं को सम्मान में अधिकार प्रदान करना उन्हे तलाक का अधिकार प्रदान करना, स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देना और महिला आयोग की नियुक्ति। इसके अलावा संविधान में संशोधन करके पंचायतों के निर्वाचित स्थानों पर महिलाओं को एक तिहाई आरक्षण देने से भी उनकी स्थिति में सुधार हुआ है।

बच्चों के अधिकार

बच्चे समाज का सबसे कमजोर हिस्सा होते हैं। यह बात विकसित, विकासशील और कम विकसित सभी देशों पर समान रूप से लागू होती है। अपरिपक्व, कमजोर, अज्ञानी और परालंबी होने के कारण बच्चे तत्काल दबाव में आ जाते हैं और शोषण का शिकार हो जाते हैं। स्कूल जाने या खेलकूद में समय बिताने के स्थान पर उन्हें नारकीय परिस्थितियों में 12–14 घंटे काम करना पड़ता है उनका अपहरण करके उन्हें बेच दिया जाता है, भीख मांगने वेश्यावृत्ति करने, यौन शोषण के लिए मजबूर किया जाता है। इस तरह की घटनाएं विश्व भर में हो रही हैं।

संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 20 नवंबर 1989 को बच्चों के अधिकारों को समझौता अपनाया, जो सितंबर 1990 को लागू हो गया। इसमें स्पष्ट किया गया है कि बच्चों के अधिकार क्या हैं और राज्यों को उनकी रक्षा करने के लिए क्या करना चाहिए। इसमें बच्चों के आम अधिकारों के अलावा बच्चों की रक्षा और कल्याण की व्यापक व्यवस्थाएं हैं। बच्चों के अधिकारों के संबंध में पहला अंतर्राष्ट्रीय समझौता 1924 में राष्ट्र संघ ने स्वीकार किया था। 1966 के नागरिक और राजनीतिक अधिकार समझौते और आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार समझौते में भी बच्चों के अधिकारों की रक्षा के उपाय किए गए थे। भारत सरकार ने समय–समय पर बच्चों के अधिकारों की रक्षा उन्हें जोखिम के कार्यों से अलग रखने और उनके कल्याण के लिए समय–समय पर अनेक कानून नियम और विनियम बनाए हैं। तथापि सहयोग के अभाव में इस दिशा में विशेष कुछ नहीं किया जा सकता।

अल्पसंख्यकों, जनजातियों के अधिकार

संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकारों के दायरे में राष्ट्रीय, नृजातीय (नस्ली), धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यक और जनजातियां भी आती हैं। महासभा ने आम राय से इनके अधिकारों की घोषणा स्वीकार की। इसकी प्रस्तावना में कहा गया है कि कानून के शासन के आधार पर स्थापित लोकतांत्रिक ढांचे में अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा करना समाज के विकास का अभिन्न हिस्सा है। घोषणा के पहले अनुच्छेद में राज्यों से अनुरोध किया गया है कि ऐसे अल्पसंख्यकों की पहचान की जाए और उन्हें बढ़ावा दिया जाए। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

कुरुक्षेत्र मंगाने का पता

विज्ञापन और प्रसार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, तल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	सात रुपये
वार्षिक शुल्क	:	70 रुपये
द्विवार्षिक	:	135 रुपये
त्रिवार्षिक	:	190 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	500 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	700 रुपये (वार्षिक)

एड्सः जानकारी और जागरूकता

अजीत कुमार

एड्स का एकमात्र इलाज उसकी रोकथाम है। अतः शिक्षा एवं जागरूकता का इसमें अहम स्थान है। यह तेजी से फैलने वाली महामारी अभी अफ्रीकी देशों के तुलना में भारत में कम है, मगर इसका फैलाव बेहद चिंता का विषय है। कुछ समय पूर्व हुए सर्वेक्षण से पता चला कि देश के कुछ जिले अभी भी ऐसे हैं, जहां सिर्फ 20 प्रतिशत लोगों ने ही इस बीमारी का नाम सुना है।

बिहार इन राज्यों में सबसे आगे है। पूरे राज्य में एड्स के बारे में जागरूकता 21–22 प्रतिशत है। चूंकि बिहार गांव प्रधान राज्य है, और यहां की एक बड़ी आबादी मजदूरी के लिए बाहर जाती है, यहां पर खतरा और भी बढ़ जाता है। बाहर जाने वाले मजदूर लंबे समय तक परिवार से अलग रहते हैं। ये छोटी सी भूल काफी घातक हो सकती है, इसका एहसास उन्हें तब होता है, जब काफी देर हो जाती है, और वो सेक्स संबंधित बीमारियों/एड्स से ग्रसित हो जाते हैं।

प्रधानमंत्री डा. मनमोहन सिंह ने युवाओं को संबोधित करते हुए कहा कि एड्स की रोकथाम के लिए युवाओं का जागरूक होना जरूरी है। उन्होंने आह्वान किया कि युवा वर्ग सही जानकारी एवं फैसले से इस बीमारी से निबट सकता है। उन्होंने इस गलत अवधारणा को समाप्त करने को कहा कि एड्स के मरीज के साथ उठने–बैठने से एड्स हो जाता है। एड्स के मरीजों को सहानुभूति एवं सहयोग की जरूरत है।

महामहिम उपराष्ट्रपति भैरों सिंह शेखावत ने इस अवसर पर कहा कि बाल विवाह एक अभिशाप है। इस तरह के रोग के फैलने में बाल विवाह एवं इसके जैसी कुरीतियों का भी योगदान है। कम उम्र में शादी होने से व्यक्ति उतना समझदार नहीं होता और रोगों के बारे में उसकी जानकारी सीमित होती है।

एड्स के मरीजों को सम्मान भरी जिंदगी देना भी बीमारी के रोकथाम के लिए जरूरी है। ऐसा करने पर ही लोग खुल कर सामने आएंगे और इस पर अंकुश लगा सकेंगे। एचआईवी/एड्स से ग्रसित व्यक्ति अपनी जानकारी एवं अनुभव और लोगों तक बांट पाएगा। अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय, राज्य, जिला एवं अन्य स्तरों पर बहुत सारी संस्थाएं इस विषय पर काम कर रही हैं। भारत में राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) की शुरुआत इस कार्य को लेकर किया गया। पिछले 17 वर्षों में इस संस्था ने काफी काम किया है। शुरू के कुछ वर्षों में नाको का मुख्य काम जन चेतना एवं जागृति तथा रक्तदान के लिए खून की जांच, जन संचार, प्रचार एवं निगरानी का था। एड्स की बीमारी का मुख्य कारण असुरक्षित यौन संबंध है। (86 प्रतिशत) अन्य प्रमुख कारण हैं संक्रमित रक्त, संक्रमित सुई, माता–पिता से बच्चों में संक्रमण एवं नशावृत्ति। उत्तर–पूर्व के राज्यों में नशावृत्ति एड्स/एचआईवी के फैलने का मुख्य कारण है।

एड्स यानी (एक्वायर्ड इम्यूनो डेफिशियेंसी सिंड्रोम) अर्थात बीमारियों से लड़ने के ताकत का कम होना है। यह अपने आप में कोई बीमारी नहीं है, बल्कि किसी बीमारी के होने पर उसके विरुद्ध लड़ने की ताकत बहुत कम लगभग समाप्त सी हो जाती है, जिससे प्रतिरोधी क्षमता के क्षीण होने के कारण मृत्यु हो जाती है। एड्स का मुख्य कारण एचआईवी वायरस है। वैज्ञानिक अनुसंधान के अनुसार यह वायरस अफ्रीका के रीसस बंदर से इंसानों में प्रविष्ट हुआ। परिणाम स्वरूप अस्सी के दशक में अफ्रीकी देश तेजी से इसकी चपेट में आ गए। तब से यह बीमारी तेजी से अन्य देशों में फैलने लगी। जिन देशों में यौन संबंधों में खुलापन है, वहां एड्स जंगल की आग की तरह फैल गया। वेश्याओं के पास आने–जाने से इसका खतरा बढ़ जाता है।

भारत में एड्स का पहला केस 1986 में प्रकाश में आया। तभी सरकार ने इसकी गंभीरता को समझते हुए एक उच्चस्तरीय

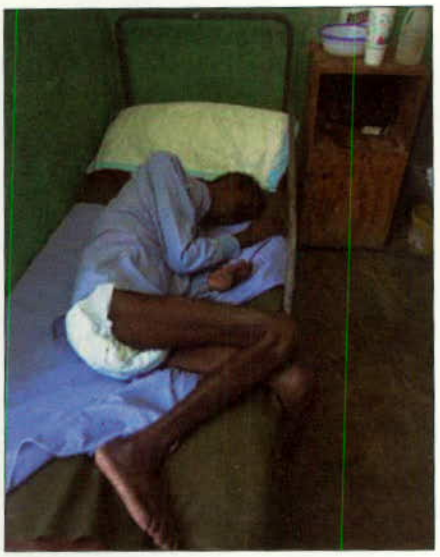

समिति गठित की। अगले ही वर्ष राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम की शुरुआत भी दी गई। हाल के वर्षों में राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम (नाको) ने अपना ध्यान कुछ खास वर्गों पर केंद्रित किया है, जहां एचआईवी/एड्स की संभावना ज्यादा है। ट्रांसपोर्ट, बस, ट्रक ड्राइवर, अन्य स्थानों से आने वाले मजदूर, वेश्यावृत्ति में लगी महिलाएं एवं अस्पताल जहां खून देने या इंजेक्शन देने की जरूरत होती है। इसके अलावा युवा वर्ग जो ड्रग्स लेता है। इसकी संभावना महाविद्यालयों, खासकर के उत्तर–पूर्व राज्यों– मिजोरम, नगालैंड, मणिपुर, त्रिपुरा आदि में। यहां लोग एक ही सुई से नशा लेते हैं।

एड्स की महामारी को रोकने के लिए दवा निर्माण कंपनियों ने बड़े पैमाने पर अनुसंधान किया है। लेकिन जब तक इसका टीका नहीं आता, तब तक जागरूकता एवं रोगियों के प्रति बिना भेदभाव का व्यवहार एवं सम्मान ही उसका इलाज है। एड्स के रोगियों की नौकरियों से निकालने की कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए, क्योंकि यह छुआछूत की बीमारी नहीं है। एड्स के कीटाणु व्यक्ति के शरीर में ही फैलते हैं।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम, भारत
भारत में एड्स रोगियों की संख्या (नाको के अनुसार)
(30 सितंबर, 2004 तक)

क्र. सं.	राज्य/सं. शा.	एड्स पीड़ित
1	आंध्र प्रदेश	9549
2	असम	225
3	अरुणाचल प्रदेश	0
4	अंडमान और निकोबार द्वीप समूह	33
5	बिहार	155
6	चंडीगढ़ (संघ शासित प्रदेश)	964
7	दिल्ली	925
8	दमन और दियू	1
9	दादर और नगर हवेली	0
10	गोवा	440
11	गुजरात	4667
12	हरियाणा	382
13	हिमाचल प्रदेश	182
14	जम्मू और कश्मीर	2
15	कर्नाटक	2043
16	केरल	1769
17	लक्षद्वीप	0
18	मध्य प्रदेश	1202
19	महाराष्ट्र	12783
20	उड़ीसा	128
21	नगालैंड	507
22	मणीपुर	2866
23	मिजोरम	92
24	मेघालय	8
25	पांडिचेरी	302
26	पंजाब	292
27	राजस्थान	1089
28	सिक्किम	8
29	तमिलनाडु	37087
30	त्रिपुरा	5
31	उत्तर प्रदेश	1383
32	पश्चिम बंगाल	2397
33	अहमदाबाद नगर निगम	399
34	मुंबई नगर निगम	5711
	कुल	**87596**

सरकारी, गैर–सरकारी, व्यापार, एवं अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के प्रयास से शिक्षा एवं जागरूकता कार्यक्रमों में वृद्धि हुई है। अब – अधिकांश स्थानों पर अलग सुइयों का प्रयोग किया जाता है, रक्तदान के पहले एड्स के लिए जांच की जाती है, रतिज रोग जो कि एड्स के महत्वपूर्ण एवं प्रमुख कीटाणु हैं, को रोकने एवं इलाज के लिए व्यापक प्रबंध किए गए हैं। खतरे के स्थानों जैसे कोठे, बड़े बाजार–हाट ही नहीं बल्कि कई अन्य सार्वजनिक स्थानों पर मुफ्त कंडोम बाटे जाते हैं। अब तो कई जगहों पर कंडोम मशीनें लगी हुई हैं जिनसे व्यक्ति बिना संकोच के ले सकता है। इसके अलावा कंडोम दवा दुकानों में भी उपलब्ध हैं।

अब तो हिंदुस्तान लैटेक्स कंपनी महिला कंडोम भी बना रही है, हालांकि अभी ये महंगे हैं, मगर भविष्य में ये सस्ते हो सकते हैं।

गांवों में एड्स के खिलाफ प्रचार/प्रसार के लिए रेडियो, नुक्कड़, गीत, रैलियां आदि का प्रयोग किया जा रहा है। भारतीय समाज के नैतिक मूल्यों में एक साथी के प्रति निष्ठा की जो बात कही गई है। उसे भी लोगों तक एक बार फिर पहुंचाने की जरूरत है। स्कूल कालेज एवं साक्षरता मिशनों को भी इस अभियान को शामिल करना होगा।

एक खुली बातचीत का माहौल बनाना होगा, जिससे आम लोग डाक्टरों एवं परामर्शदाताओं से खुलकर विचार–विर्मश कर सकें। गावों के शिक्षित समाज को भी इसमें आगे आकर सहयोग देना होगा। तमाम स्वास्थ्य अधिकारियों एवं चिकित्सकों को नियमित दौरों पर गांवों में जाना होगा। प्रचार/प्रसार सामग्री यथासंभव हिंदी एवं अन्य स्थानीय भाषाओं में पतंगों, बोर्ड, पोस्टर आदि पर होना चाहिए।

इस बीमारी के फैलने की संभावना गावों में तेजी से है। जो लोग काम के सिलसिले में दूसरे शहर या घर से लंबे समय तक बाहर रहते हैं, उनमें इस रोग के होने का खतरा है। ये लोग अनेक स्थानों में संबंध बनाने के पश्चात अपने घर वापसी आने पर पत्नी के साथ संभोग करते हैं, जिससे ये पत्नी में फिर बच्चे तक पहुंच जाता है।

गांवों में सबसे बड़ी समस्या जानकारी का अभाव है अभी भी कई लोग मर तो जाते हैं पर उनकी बीमारी का सही कारण पता नहीं चल पाता है।

हाल ही में एड्स की दवाओं के दाम कुछ कम हुए हैं, फिर भी यह आम इंसान के पहुंच से बाहर हैं। ये दवाएं 'एंट्रीरेट्रोवायरल' ड्रग्स के नाम से जानी जाती हैं। इनकी क़ीमतों में कमी ने एक बड़े वर्ग को उसके इस्तेमाल के लायक बना दिया है। मगर आम वर्ग के लिए अभी यह पहुंच से बाहर है।

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन
स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार
रिस्क/संक्रमण वर्ग
(1986 से 30 सितंबर 2004 की अवधि की रिपोर्ट)

	रोगियों की संख्या	प्रतिशत
यौन संबंधित	75077	85.71
प्रसवपूर्व संक्रमण	2752	3.14
रक्त/रक्तदान	1903	2.17
इंजेक्शन/दवा	2549	2.91
अन्य	5315	6.07
कुल	**87,596**	**100.00**

आयु वर्ग	पुरुष	महिला	कुल
0–14 वर्ष	2091	1386	3477
15–29 वर्ष	18336	10978	29314
30–49 वर्ष	37700	10834	48534
50 वर्ष से अधिक	4965	1306	6271
कुल	**63,092**	**24,504**	**87,596**

वैसे भी एड्स के ज्यादातर रोगी गरीब एवं शोषित वर्ग के हैं। अंतर्राष्ट्रीय संगठनों यू.एन. एड्स और दवा निर्माण कंपनियां इस पर लगातार काम कर रही हैं। यू.एन. एड्स– विश्व बैंक, विश्व स्वास्थ्य संगठन, अंतर्राष्ट्रीय मजदूर संगठन, यूनेस्को, यूनिसेफ, यू.एन.डी.पी., यू.एन.ओ.डी.सी. एवं यू.एन.एफ.पी. का समूह है जो कि इस विषय पर मिल कर काम कर रहे हैं।

भारत में कुछ राज्यों में एड्स काफी फैल चुका है एवं कुछ राज्यों में अभी यह एक छोटे जनसंख्या को ग्रसित कर पाया है। मगर उसमें खुश या असावधान होने की बात नहीं क्योंकि अभी ये तथ्यों की जानकारी के आधार पर कहा जा रहा और कई लोग अभी इसकी सही जानकारी नहीं रखते हैं।

30 सितंबर 2004 को एड्स के रोगियों का सूची के मुताबिक राज्यों एवं संघ शासित प्रदेशों की संख्या नीचे दी जा रही है। यह जानकारी नाको के मासिक 'बीहेवरियल सर्ववेलेंस सर्वे' के मुताबिक है।

जागरूकता एवं सही फैसले ही इस तेजी से फैलती बीमारी का इलाज है, यह समझना नितांत आवश्यक है, तभी हम इस बीमारी को अपने गावों में फैलने से रोक पाएंगे। ❑

(लेखक रेडियेंस मीडिया के प्रबंध संपादक एवं द ओसयेनिक ग्रुप के अध्यक्ष हैं)

कृत्रिम अंगों का संसार

डा. राजेंद्र कुमार कनौजिया

एक बड़ा विचित्र परंतु प्रचलित तथ्य है, यदि आप छिपकली की पूंछ पर वार करें या फिर छिपकली को स्वयं अपनी जान का खतरा नजर आए तो वह बचाव के लिए तुरंत अपनी पूंछ का पिछला भाग गिरा देती है, उसकी पूंछ कटकर गिर जाती है। हम सोचते हैं हमने उसकी पूंछ काट दी या फिर ऐसा करना गलत या अब बेचारी बिना पूंछ के रहेगी। आठ–दस दिन बाद आप उसी छिपकली को देखते हैं तो पाते हैं कि अरे इसकी पूंछ तो फिर से निकल रही है और सच उसकी पूंछ का अगला हिस्सा पुनः बन रहा होता है।

है ना यह एक विचित्र परंतु सत्य बात! यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो हमें इनसे अलग और थोड़ा पीछे भी कर देती है। प्रकृति ने यह अनमोल उपहार हमें नहीं दिया है। हमारे किसी भी कारण से कटे–फटे अंग पुनः जीवित या उगते नहीं। एक बार हमारे से कटकर अलग हो गए अंग कभी–कभी विभिन्न सावधानियों और विशेष चिकित्सा के द्वारा कुछ भाग्यशाली लोग यदि फिर से जोड़ दिए जाएं या प्रत्यारोपित कर भी दिए जाएं तो इनका प्रतिशत लगभग छह से आठ प्रतिशत ही है। उनकी भी जटिल कागजी कार्यवाही, प्रत्यारोपित करने वाले अंग की उपलब्धता, अंगदान करने वाले व्यक्ति की सभी चिकित्सा जांच में ठीक होने की संभावना तथा अंत में एक बड़ी परेशानी इन शल्य चिकित्सालाओं में आने वाले खर्च और आपरेशन के बाद की चिकित्सा।

आज की आपा–धापी की जिंदगी में जहां प्रतिस्पर्धा में हमें गति और गतिशील वाहनों की अनिवार्यता ने जकड़ लिया है, हम हर जगह एक दूसरे से पहले और तेज पहुंचना चाहते हैं। हर हाल में अपने प्रतिद्वंद्वी से आगे रहना चाहते हैं। वहीं यह भूल जाते हैं कि जहां हम चल रहे हैं या जिस सवारी पर सवार हैं वे अधिक रफ्तार में नियंत्रित नहीं

रह पातीं। स्कूटर, कार, साइकिल तो रिपेयर की जा सकती है परंतु आपका शरीर!

शारीरिक विकृत्ति के बारे में बात करते समय सबसे पहले इनके कारणों पर गौर करना आवश्यक है। तेज रफ्तार की वजह से वाहनों की टक्कर से दुघर्टना की वजह से, या विभिन्न बीमारियों की वजह से हमारे शरीर के हाथ–पैरों के कटने का नुकसान होने का खतरा सदैव बना ही रहता है।

दुघर्टना में कटने वाले अंगों को यदि सावधानीपूर्वक साफ तरीके से तुरंत समय रहते प्राय छह घंटे से पहले यदि विशिष्ट सुविधाओं से युक्त अस्थिरोग विशेषज्ञ या प्लास्टिक सर्जन के पास पहुंचा दिया जाये तो इन्हें फिर से लगाया जा सकता है।

परंतु जहां अंग को काटना आवश्यक है या फिर कटा हुआ अंग इस स्थिति में नहीं है कि उसे प्रत्यारोपित किया जा सके उसके बाद के उपायों पर बात करना आवश्यक है।

दुघर्टना में चोट के कारण, अंगों की पतली और किनारे की नसों, रक्तवाहनियों की बीमारियों के कारण, विभिन्न प्रकार के कैंसर, जन्मजात ऐसी विकृतियां जिन्हें किसी भी तरह ठीक नहीं किया जा सकता, और जो आपके दिन–प्रतिदिन के कार्यों को प्रभावित करती हैं, हाथ–पैर के ऐसे संक्रमण जो अंगों को बुरी तरह प्रभावित कर चुके हों तथा जिनसे स्वयं की जान का खतरा बन गया हो, लकवे के कारण लगभग बेकार हो गए अंग, मधुमेह से पीड़ित व्यक्ति के अंगों का खराब होना इत्यादि कारणों में अंगों को काट देना ही आवश्यक होता है।

किसी भी अंग का कट जाना अपने में एक दुख की, तकलीफ की बात है। आप शारीरिक अपंगता के साथ–साथ मानसिक, आर्थिक और सामाजिक परेशानियों से भी जूझते हैं। परंतु यह जीवन का अंत नहीं है हां एक नई शुरुआत अवश्य है जहां आपको कृत्रिम अंगों, उपकरणों और अपनों के सहयोग की आवश्यकता होगी।

अंगों के कटने में लगभग 75 प्रतिशत रक्त वाहनियों के विकार, दस प्रतिशत दुर्घटनाएं, पांच से छह प्रतिशत, कैंसर दो प्रतिशत, जन्मजात कारण तथा सात प्रतिशत अन्य कारण हो सकते हैं।

जिनमें कृत्रिम अंगों या उपकरणों, प्रोस्थेसिस लगभग 86 प्रतिशत में लगाए जा रहे हैं। जिनकी सफलता का प्रतिशत भी लगभग 80

प्रतिशत है।

हाथ और पैर के काटे जाते समय शल्य चिकित्सक को दो बातों का विशेष ध्यान देना होता है। पहली कि हाथ और पैर दोनों के कार्य अलग–अलग हैं। जहां हाथों से वस्तुओं के पकड़ने का कार्य करते हैं वहीं पैर हमारे शरीर के वजन को वहन करते हैं। अतः उनकी शल्यक्रिया से उनके उस आवश्यक हिस्से को बचाया जाता है जिससे उसमें पुनः ठीक–ठीक कृत्रिम अंग या प्रोस्थेसिस लगाई जा सके।

कृत्रिम अंगों का इतिहास बहुत पुराना है इनका उल्लेख 300 ईसा पूर्व में इटली मे पाए जाने की घटना में है।

मार्क्स सरर्गिस नामक रोमन जनरल के एक लोहे के हाथ लगाए जाने का उल्लेख लगभग 200 ईसा पूर्व में है।

सन 1579 के आस–पास पैने नामक व्यक्ति ने एक ऐसे हाथ की रचना की थी जिनकी विभिन्न संरचनाओं और उपकरणों की मदद से तलवार और अन्य हथियारों की मदद से तलवार और अन्य हथियारों को पकड़ा जा सकता था।

इसी तरह विभिन्न चरणों और विकास के कई आयामों से सफलतापूर्वक गुजर कर पैरों की घुटने के ऊपर, घुटने के नीचे, हाथों की कुहनी से ऊपर, कुटनी के नीचे और हाथों की कुछ नई–नई प्रोस्थोसिस ने जन्म लिया। इनमें 19वीं शताब्दी का दौर अत्यंत महत्वपूर्ण है। जब जन्म वैज्ञानिक अनुसंधानों, प्रयोग में आने वाली उत्कृष्ठ सामग्री, तकनीक और ज्ञान ने इस क्षेत्र में नई क्रांति ला दी।

1940 के आस–पास युनाइटेड स्टेट की प्रोस्थोटिक कमेटी की स्थापना हुई। इसमें विश्वविद्यालय तथा उत्पादन की विभिन्न प्रक्रियाओं को वैधानिक संगति प्रदान करने का निश्चय किया गया और तबसे लेकर आजतक विज्ञान में प्रगति के साथ–साथ चलते हुए प्रोस्थेसिस और आरथोसिस बनाने की पूरी प्रक्रिया आगे बढ़ रही है। सबसे पहले अधिकृत प्रोस्थेसिस बनाने का श्रेय पेपर को जाता है। उन्होंने सन 1579 में पहली बड़ी प्रोस्थेसिस कराई जिसमें घुटने, टखने तथा कूल्हे के लिए विभिन्न जोड़ उपलब्ध थे।

हाथ पैर के लिए उपयोग में आने वाली विभिन्न प्रकार की प्रोस्थेसिस के भी कई

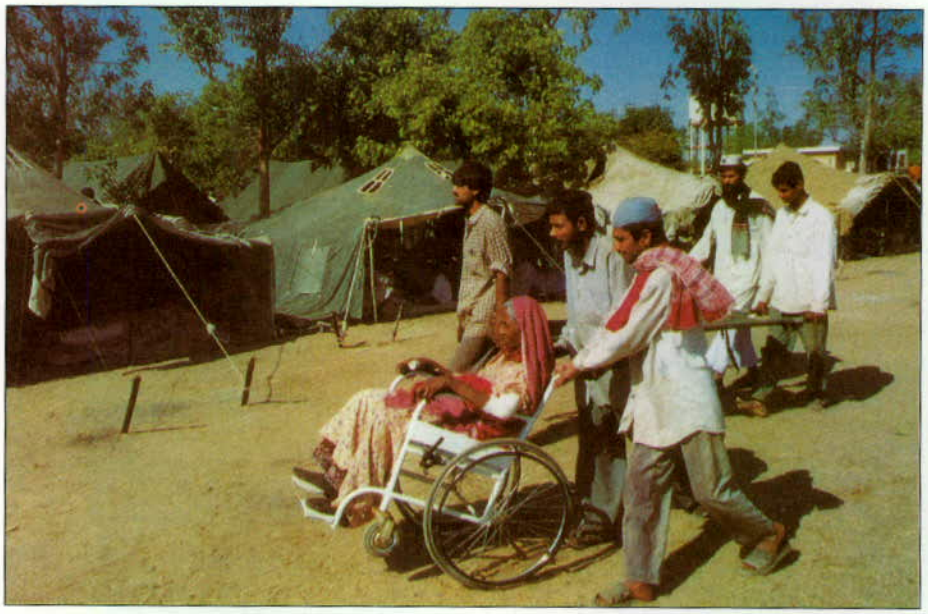

प्रकार होते हैं। जिनमें एक है इन्डोस्केल्पल जिसमें कूल्हे या घुटने के जोड़ को बनाना होता है और दूसरा प्रकार है एक्सोस्केल्पल। जहां पर कटे हुए अंगों को स्थानान्तरित करना होता है। इन दोनों प्रकारों का मुख्य उद्देश्य ना केवल कटे हुए अंग की जगह कार्य करना है बल्कि अन्य अंगों के साथ सामंजस्य भी बनाना है ताकि शरीर के विभिनन कार्यकलापों में सहयोग की स्थिति बनी रहे।

इसी प्रकार प्रोस्थेसिस बनाते समय उसके अंग के स्थान पर लगाए जाने अर्थात कहां उसे लगाना है, जैसे पैर या हाथ में उसके ऊपर यदि पैर का दायित्व है तो उसके लिये उपयोग में अपने वाला पदार्थ तथा उसके बनाए जाने के तरीके में भी अंतर आएगा। एक स्कूल जाने वाली बच्ची की प्रोस्थेसिस से वृद्ध महिला की प्रोस्थेसिस में बहुत अंतर होगा। उसी तरह किसी मजदूर, किसान या दफ्तर में काम करने वाले व्यक्ति की प्रोस्थेसिस में अंतर होता है। दूसरी बात जो ध्यान में रखने की है कि शरीर के अंग को काटने का कारण क्या था तथा मरीज की उम्र क्या है, फिर शरीर के बचे हुए हिस्से में ताकत, किस स्थान से पैर या हाथ काटना पड़ा तथा उन स्थानों, जोड़ों पर कितना गतिचक्र या रेंज उपस्थित है।

जैसे यदि विभिन्न कारणों से, हाथ–पैर की नसों के खराब होने से हाथ या पैर काटे गए हैं, तो दूसरे पैर की नसों की पूरी जांच भी आवश्यक है, कि उसकी नसों में रक्तवाहनियों में रक्त संचार कितना है।

बड़े–बुजुर्ग लोगों में घर में रहने की जगह, फर्श, सहयोगी साथी की उपस्थिति पर भी प्रोस्थेसिस बनाने की बात निर्भर करती है फिर व्यक्ति की मानसिक, आर्थिक तथा सामाजिक स्थिति भी देखने होती है।

अल्पकालिक प्रोस्थेसिस– इसका उपयोग उन लोगों में मुख्यतः होता है जिनमें किसी भी धमनियों के रोगों की वजह से पैर काटना पड़ा हो, तथा उन्हें इस बारे में जांचने और आने वाले समय में पैर की स्थिति कैसी होगी, अर्थात क्या पैर और काटा जाएगा, इस पर भी निर्भर करते हुए कुछ दिनों के लिए इस तरह की प्रोस्थेसिस इस्तेमाल करने को देते हैं, इन्हें पायलॉन भी कहते हैं। शल्यक्रिया के तुरंत बाद इन्हें लगाया जा सकता है। इससे मानसिक सांत्वना भी मिलती है, तथा अंगों के काटे जाने के तुरंत बाद यदि इन्हें प्रोस्थेसिस से रिप्लेस कर दें तो मरीज को मानसिक सदमा कम ही लगता है। यदि इस अल्पकालिक प्रोस्थेसिस के सहारे मरीज अपनी टांग गंवाने के तुरंत बाद लगभग सामान्य रूप से चल सकता है तो उसे भी अच्छा लगता है। इसमें मरीज को विभिन्न प्रकार की कसरत तथा मांसपेशियों को दुरुस्त रखने में भी सहायता मिलती है।

इस प्रकार की प्रोस्थेसिस के इस्तेमाल का एक फायदा यह भी है कि सर्जरी के तुरंत बाद यदि अंग में सूजन है तो कुछ दिनों के बाद आवश्यकतानुसार प्रोस्थेसिस को बदला भी जा सकता है।

पैरों के उपयोग में आने वाली प्रोस्थेसिस के बनाने में मॉडलर प्रोस्थेसिस का भी अपना अलग और महत्वपूर्ण स्थान है। मॉडलर प्रोस्थेसिस में प्रोस्थेसिस को पूरी सोची–समझी निर्धारित प्रक्रिया के तहत बनाया जाता है। ये अत्यंत उपयोगी होती हैं इन्हें विभिन्न भागों में आसानी से लगाया और निकाला जा सकता है। इसके निर्माण का श्रेय मुख्यतः मैकेंजी को जाता है जिन्होंने सन 1973 के आसपास इसकी संरचना की।

इसकी मुख्य सुविधाओं में एक तो यह तुरंत ही मरीज के कामों में सहायक होती है, देखने में सुंदर होती है, इसके कल–पुर्जों को बदला जा सकता है और उपयोग में ज्यादा खर्च भी नहीं होता।

अन्य विभिन्न प्रकार की प्रोस्थेसिस में टोटल कांटेम्ट, साकेट फिटिंग, पेटेलर टेन्डन बियरिंग सक्शन, साकेट लिंब प्रोस्थेसिस, वॉन सक्शन लिंब प्रोस्थेसिस, आर्टिफीशियल पैर इत्यादि प्रचलित हैं।

SACH (सैच) फीट, भी एक अत्यंत उपयोगी पैर के पंजों की प्रोस्थेसिस है, हमारे टखने या एंकल ज्वाइंट में गति की एक निश्चित और सीमित सीमा है। उस स्थिति में इस तरह के पैर का अच्छा उपयोग है। यह पुरुषों, खासकर कामकाजी पुरुषों के लिए उपयोगी है परंतु पतले पैरों वाली स्त्रियों में इतनी प्रचलित नहीं है।

पैरों पर वजन पड़ता है, तथा हमें पैरों के सहारे चलना भी रहता है अतः केवल कटे हुए अंगों को कृत्रिम अंग से बदल देना ही मुख्य कार्य नहीं है, जरूरी यह भी है कि उनके द्वारा ठीक से काम भी लिया जा सके, अतः प्रोस्थेसिस बनाने के साथ–साथ आवश्यक है उनके सहारे चलना सीखना या गेट ट्रेनिंग। यदि प्रोस्थेसिस ठीक से बनी है, सीधी तरह शरीर का वजन एक रेखा में सह सकती है, मरीज के हाथ–पैर की मांसपेशियां स्वस्थ है जोड़ों में उपयोगी रैंज ऑफ मूवमैंट है तथा मरीज स्वयं भी प्रयत्नशील है तो मरीज को गेट ट्रेनिंग में कोई तकलाफ नहीं होती और वो जल्दी सीख भी जाते हैं। बच्चों या मानसिक रोगियों या बहुत मोटे व्यक्तियों में गेट ट्रेनिंग में थोड़ा तकलीफ हो सकती है।

सबसे पहले मरीज को कृत्रिम अंग पर संतुलन बनाने को कहा जाता है, एक बार–संतुलन बन जाने पर उसे सीधी लाइन पर सहारे से चलाया जाता है। फिर उसे छड़ी द्वारा सहारे से चलने प्रेरित करते हैं। बड़े–बड़े शीशों के सामने चलने से, जिम में चलने से मरीज को छोटी जगह में भी चलने का आत्म–विश्वास आता है।

गेट–ट्रेनिंग में विडियो टेप की मदद भी ले सकते हैं। मरीज को यह भी बताना आवश्यक है कि कैसे प्रोस्थेसिस के सहारे बैठा जाए तथा कैसे उठा जाए, सीधी सतह पर चलना, स्लोप पर चलना, सीढ़ियों पर चढ़ना, कार, ट्रेन, बस इत्यादि वाहनों में चढ़ना–उतरना, आजकल तो विभिन्न स्थानों पर रैंप बने होते हैं जिससे बहुत अधिक परेशानी नहीं होती।

मरीज का आत्मविश्वास बढाया जाना आवश्यक है कि उसे इस कृत्रिम अंग को भी अपने शरीर का एक हिस्सा मानकर चलना है इसके साथ ही आगे का जीवन जीना है। उसे इस कृत्रिम अंग की देखभाल की वैसे ही करनी है जैसे उसे अपने दूसरे अंग की।

हाथों के कृत्रिम अंग – हाथों के कृत्रिम अंग बनाते समय इस बात का ध्यान रखा जाता है कि व्यक्ति किस तरह के कार्यक्षेत्र से जुड़ा है अर्थात उसका कार्य कितना कठिन या सरल है। उसे वजन उठाने का काम करना है या रोजमर्रा के सामान्य काम।

इस प्रकार की प्रोस्थोसिस में कंधे के स्थान पर प्रयोग में आ सकने वाली प्रोस्थोसिस, कुहनी के ऊपर से, कुहनी से तथा कुहनी के नीचे इस्तेमाल होने वाली प्रोस्थेसिस, हाथ के पंजे के स्थान लेते वाली, तथा कटे–फटे हाथ की अंगुलियों के लिये कृत्रिम प्रोस्थेसिस।

जन्मजात विकृतियों में बच्चों में उपयोग होने वाली प्रोस्थेसिस – विभिन्न पैदायशी बीमारियों में यदि अंग कटे–फटे या विकृत पैदा होते हैं जिनमें एमेलिया फोकोमेलिया शामिल है। ऐसी स्थितियों में भी कृत्रिम अंग तो बहुत ही उपयोगी है।

थैलाडोमाइड दवा का दुष्प्रभाव – सन् 1961–62 के आसपास थैलाडोमाइड नामक दवा ने नवजात शिशुओं को एक ऐसी बीमारी से अभिशप्त किया जिसमें उनके दोनों हाथ और पैर गर्भ में ही नहीं बन पाए, ऐसी गर्भवती महिलाएं जिन्होंने इन दवाओं का उपयोग गर्भधारण के दौरान किया उनके बच्चे इस अभिशाप से ग्रस्त हो गए।

कुछ बीमारियों में बच्चे के शरीर में केवल एक दो अंगुलियां ही कंधे के आस–पास लगी हुई थीं।

ऐसे में कृत्रिम अंग देते समय बच्चे की उम्र, उसकी बुद्धि क्षमता तथा परिवार में सहयोग पर निर्भर करता है। बच्चों को अपने बचे हुए अंगों की सहायता से अपने दिनभर के आवश्यक काम करने की ट्रेनिंग दी जाती है।

बैटरी चालित कृत्रिम–अंग – ऐसे बच्चे जिनमें हाथ या पैर या तो पूरे ही नहीं हैं या छोटे या विकृत हैं उनमें शुरू से ही बैटरी या पावर के इस्तेमाल का प्रयास चलता रहा है। बहुत सारे अंग बनाए गए हैं जिनमें बैटरी इत्यादि से गति देने का प्रयास किया गया है।

सन् 1957 लिंडमैन के बाद से इन कार्यों में विशेष प्रगति आई है। उन्होंने कंप्रेस्ड कार्बन न्यूमैटिक कृत्रिम अंगों की रचना की थी।

सन 1970 के आस–पास सारबे ने मांसपेशियों की सहायता से इन कृत्रिम अंगों को गतिशील बनाने का कार्य किया स्वीडन, ऑरबेरों, में बिजली की सिग्नल को हाथों की बड़ी मांसपेशियों में दौड़ाकर डी.सी. वोल्टेज (D.C.Voltage) के द्वारा अंगों को चलाया।

कृत्रिम अंगों के साथ समस्याएं

- प्रायः अच्छी तरह फिट ना होने पर, संपर्क वाले स्थान पर रगड़ से दर्द, कैलासिटी, घाव इत्यादि बन लाना।
- ठीक से लगे ना होने पर पूरा कार्य ना कर पाना।
- आसपास के जोड़ों का दर्द, सूजन, वजन लेने में परेशानी।
- आस–पास के बड़े जोड़ों का गठिया
- त्वचा की समस्याएं, खुजली, त्वचा का फटना
- ज्यादा समय के बाद प्रोस्थेसिस के विभिन्न भागों का टूट जाना, खराब हो गया।

बचाव तथा प्रोस्थेसिस के उपयोग में सावधानियां

- प्रोस्थसिस की साफ–सफाई आवश्यक है विशेषकर गर्मियों में रोज शाम को प्रोस्थेसिस को साबुन के पानी से धोया जा सकता है। जिससे त्वचा के रोग इत्यादि नहीं होंगे।

- इनके अंदर सूती मोजे पहने जाने चाहिए, जिन्हें रोज साफ करवाकर तथा धूप में सुखाना चाहिए, बेहतर है दो जोड़े रखें।
- थोड़ा भी टूट–फूट होने पर उसकी जांच–पड़ताल कराएं तथा उसे रिपेयर भी कराएं, इससे बड़ा नुकसान होने से बचा जा सकता है।
- प्रोस्थेसिस किसी अच्छे और नजदीकी विशेषज्ञ से ही बनवाएं, जिससे एक तो प्रोस्थेसिस अच्छी बनेगी और टूट–फूट या किसी परेशानी में आप तुरंत सलाह ले सकते हैं।

भारत में प्रोस्थेसिस के प्रचार–प्रसार तथा इसके वैधानिक शोध में डा. सेठी का नाम लिए बिना सारा विवरण अधूरा है। डा. पी.के. सेठी भारत में उपयोग में आने वाली विभिन्न प्रोस्थेसिस में 'जयपुर फुट' को एक अलग स्थान और उपयोग तथा खर्च के लिहाज से महत्वपूर्ण स्थान दिलाया है। 'नाचे मयूरी' फिल्म में नृत्यांगना सुधा चंद्रन के पैरों में पहली बार लगे कृत्रिम पैरों पर उनके नृत्य को देखकर तथा नकली पैरों का स्वरूप बिल्कुल असली पैरों की तरह पाकर बड़े परदे पर सबको उन्होंने आश्चर्यचकित कर दिया था। आज भी डा. सेठी अपने शोध में लगे हैं और नए–नए रूप ईजाद करने में लगे हैं।

सन 1975 में जयपुर में भगवान महावीर विकलांग समिति की स्थापना के बाद से इस कार्य में एक क्रांति सी आई है। यह गैर–सरकारी संस्था गरीब विकलांगों, पोलियोग्रस्त बच्चों के कृत्रिम अंग, बैसाखियां बांटना, उनका पुनर्वास और सहायता में लगी है। वे भी मुफ्त! निश्चित रूप से यह एक सराहनीय कार्य है। ऐसी और भी संस्थाएं यदि सामने आती हैं तो हजारों विकलांगों की मदद की जा सकती है।

विकलांगों के ओलंपिक में हिस्सा लेने, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आगे निकल चुनौतियों को स्वीकारने शिक्षा, कला, चिकित्सा, इंजीनियरिंग तथा राजनीति में सफलता अर्जित करने से यह अब साबित हो चुकी है कि विकलांगों को सिर्फ थोड़े से सहारे और विश्वास दिलाने की आवश्यकता है कि ये भी इस समाज के एक महत्वपर्ण अंग है।

इस क्षेत्र में कार्यरत सभी वैधानिकों, तकनीकी विशेषज्ञों तथा निर्माताओं पर भी एक बड़ी जिम्मेदारी है कि वे भी हल्के, मजबूत और सुंदर कृत्रिम अंगों का निर्माण करें। हाथ–पैर के कृत्रिम अंगों के साथ–साथ अन्य विभिन्न अंगों का कृत्रिम प्रत्यारोपण या रिप्लेसमेंट संभव है।

आंखों के आई.ओ.एल. – यानी इंट्रा आकुॅलर लेंस द्वारा प्रत्यारोपण की विधि बहुत प्रचलित है, और अत्यंत उपयोगी। आंख के लेंस में किसी चोट, उम्र, मधुमेह इत्यादि से लेंस की पारदर्शिता कम हो जाने से लेंस द्वारा किरणें या तो रेटिना तक ठीक से नहीं पहुंच पाती या फिर पहुंचने से पहले ही इधर–उधर फैल जाती हैं। मरीज को या तो धुंधला दिखता है, रोशनी में चमकीले कण नजर आते हैं या फिर दिखता ही नहीं।

ऐसी स्थिति में इस प्रकार के लेंस जिन्हें आंख के बाहरी या इंटीरियर चैंबर से प्रस्थापित किया जा सकता है का उपयोग करते हैं। इनके साथ–साथ पोस्टिरियर चैंबर में लगाने वाले विभिन्न लेंस भी लगाये जाते है।

मरीज की पटटी शल्यक्रिया के दूसरे दिन खोली जाती है तथा पूर्ण जांच के बाद उसे छुटटी दी जा सकती है।

इस शल्यक्रिया में ना तो अधिक समय लगता है, न ही जटिल बेहोशी की आवश्यकता पड़ती है अब इस तरह के आई.ओ.एल. आसानी से उपलब्ध हैं।

एक नवीनतम शोध से मालूम हुआ है कि अब अंधेपन का एक स्थाई इलाज संभव हो सकेगा। स्क्रिप्स रिसर्च इंस्टीटयूट, ब्राजील की एक खोज के अंतर्गत शोधकर्ता अस्थिमज्जा से प्राप्त 'स्टेमसेल' को नवजात चूहों में प्रवेश कराकर रेटिना में नई ब्लडवेसेल का निर्माण कराने का प्रयास कर रहे हैं।

यह नई ब्लडवेसेल (धमनियां) आंखों की क्षतिग्रस्त धमनियों की मरम्मत करने में सहायक होती हैं। इससे ब्लडवेसेल्स के असामान्य विकास पर भी रोक लगाई जा सकेगी। कार्निया का प्रत्यारोपण भी अब एक आम बात है। नेत्रदान केंद्र में कार्निया के सफल प्रत्यारोपण अब लगभग हर शहर के सरकारी और गैर–सरकारी अस्पतालों में संभव है।

श्रवण संबंधी विकारों में कृत्रिम अंग, उपकरण का उपयोग भी अब काफी किया जाने लगा है। इस तरह के श्रवण संबंधी विकार लगभग प्रति हजार में एक बच्चे में मिलते हैं, कुछ तो पैदाइशी होते हैं परंतु कुछ परिस्थितिजन्य होते हैं, या एक्वायर्ड हियरिंग डिफेक्ट।

इन विकारों के विशेष कारणों में, टाक्साप्लाजमोसिस, सिफलिस, रूबेला, साइटोमेगेलो वायरस आदि का दुष्प्रभाव या दुर्घटना प्रमुख हैं। अन्य कारणों में पीलिया, कुछ दवाइयां बैक्टीरियल मेनेंजाइरिस भी एक प्रमुख कारण है।

इस प्रकार के रोगों या विकारों में पूर्ण जांच–पड़ताल/ऑडियोमिट्री और परिक्षण के उपरांत कॉकलियर इम्प्लांट देते हैं। यह एक इलेक्ट्रालिक यंत्र होता है, जो हेयर सेल का कार्य करता है, तथा बची हुई तांत्रिकाओं तक ध्वनि संदेश पहुंचाता है इससे बच्चे को संदेश ग्रहण करने में सुविधा होती है।

पहले इन श्रवण यंत्रों को पैरों के पास बांधा जाता था। आज इन्हें कान के पास या जेब के रखा जा सकता है। ये श्रवण यंत्र पांच मुख्य प्रकार के होते हैं।

डिजिटल श्रवण यंत्र एक बहुत विकसित है। इसमें शत–प्रतिशत, डिजिटल तकनीक का उपयोग करके स्तर और ध्वनि को साफ–साफ सुना जा सकता है।

त्वचा प्रत्यारोपण, बोन पेस्ट या बोन रिप्लेसमेंट बोन बैंक आज कुछ अस्पतालों में अब कल्पना से निकलकर एक सच्चाई के रूप में सामने खड़े हैं जहां पर एक मरीज को दूसरे मरीज या व्यक्ति की निकली गई हडडी को विभिन्न विधियों द्वारा प्रसंस्कृत करके प्रत्यारोपण किया जा रहा है। ऐसे बैंक विभिन्न अस्पतालों में चल रहे हैं –

कृत्रिम अंगों के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए विभिन्न सरकारी, गैर–सरकारी, स्वयंसेवी संगठनों में से कुछ प्रमुख हैं :

- **आईपीएच – इंस्टीट्यूट ऑफ फिजीकली हैंडिकेप्ड, (आईटीओ के पास) दिल्ली–4**
- **एंडोलाइट – नारायणा इंडस्ट्रियल एरिया, दिल्ली**
- **भगवान महावीर विकलांग सहायता समिति, जयपुर**
- **अलिंको – भटट् प्रोस्थेटिक एंड सर्जिकल, डी–33, मलकागंज, दिल्ली** ❑

(लेखक हिंदूराव अस्पताल, दिल्ली में वरिष्ठ अस्थिरोग विशेषज्ञ हैं।)

घासों में श्रेष्ठ सुगंधीय फसल नींबू घास (लेमनग्रास)

रत्नेश कुमार राव

लेमनग्रास को नींबू घास के नाम से भी जाना जाता है। इसका वैज्ञानिक नाम सिम्बोपोगान फ्लेक्सुओसस है। घास कुल के इस पौधे की पत्तियां सामान्यतया हमारे घरों में चाय में उपयोग की जाती हैं। व्यावसायिक स्तर पर इसकी खेती देश के विभिन्न प्रांतों में हो रही है यथा – कर्नाटक, असाम, पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश व महाराष्ट्र आदि। नींबू घास की व्यावसायिक खेती में तेल इसका मुख्य उत्पाद होता है। नींबू घास की पत्तियों को आसवित करने के पश्चात इसका तेल निकाला जाता है। इसके तेल में 80–90 प्रतिशत सिट्राल पाया जाता है। जो एक महत्वपूर्ण घटक है। सिट्राल की अधिकता के कारण ही इसके तेल से नींबू जैसी तीक्ष्ण सुगंध आती है।

प्रजातियां

इसकी प्रमुख प्रजातियां हैं – कृष्णा, सी. के.पी.–25, प्रमाण, प्रगति व जम्मू घास। खेती के दृष्टिकोण से इन सबकी अपेक्षा सी.के.पी. –25 ज्यादा लाभकारी सिद्ध हुई है। सी.के. पी.–25 के पौधों की लम्बाई बाकी पौधों की अपेक्षाकृत अधिक (6 फुट) होती है अतः तेल की मात्रा भी लगभग एक प्रतिशत अधिक पायी जाती है।

गुण एवं उपयोग

सिट्राल से अल्फा आयोनोन तथा बीटा आयोनोन तैयार किये जाते हैं। बीटा आयोनोन से अगले चरण में रासायनिक क्रिया द्वारा 'विटामिन ए' तैयार किया जाता है जिसका उपयोग विभिन्न दवाइयों के निर्माण में होता है। अल्फा आयानोन का रसायन संश्लेषण द्वारा गंध द्रव्य तथा अन्य सुगंध रसायन तैयार किये जाते है।

इनका उपयोग विभिन्न औषधियों निर्माण, उत्कृष्ट इत्र, सौन्दर्य प्रसाधन, साबुन आदि बनाने में किया जाता है। विश्व भर में भारत व ग्वाटेमाला लेमनग्रास के प्रमुख उत्पादक देश हैं। हमारे देश में वर्तमान में 17000–18000 एकड़ में इसकी खेती हो रही है जिससे तकरीबन 750–800 टन तेल का प्रतिवर्ष उत्पादन हो रहा हैं संपूर्ण विश्व में लगभग 1400–1500 टन तेल का उत्पादन हो रहा है। एक अनुमान के अनुसारन भारत द्वारा करीब 75 टन तेल का प्रतिवर्ष निर्यात किया जा रहा है।

उपयुक्त जलवायु एवं भूमि

नींबू के लिए उष्ण तथा समशीतोष्ण जलवायु उपयुक्त मानी जाती है। ऐसे क्षेत्र जहां जलवायु गर्म तथा आर्द्र हो, जहां पर्याप्त धूप पड़ती हो तथा जहां वर्ष भर 200 से 250 सेंटीमीटर वर्षा होती हो अथवा सिंचाई के साधनों की उपलब्धता हो, लेमनग्रास के लिए उपयुक्त जलवायु मानी जाती है। यूं तो यह रेडलेटेराईट, कम उपजाऊ व ऊसर क्षेत्र में भी उपजाई जा सकती है लेकिन पैदावार कम मिलेगी। अगर इन्हें अनुकूल परिस्थितियों में उगाया जाय तो निःसंदेह इसकी फसल में बढ़ोत्तरी होगी। कम उपजाऊ भूमि से वर्षभर में 4–5 कटिंग ली जा सकती हैं।

इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि एक बार फसल लगाने के बाद 5 वर्षों तक लगातार इससे फसल की प्राप्ति होती है। अतः यह आवश्यक है कि पहली जुताई अच्छी तरह की जाएं। फसल लगाने से पूर्व पलटने वाले हल द्वारा आड़ी–तिरछी तीन बार जुताई करनी चाहिए। यदि मिट्टी में दीमक का प्रकोप हो तो उसे किसी जैविक कीटनाशक का प्रयोग कर पाटा चला कर भूमि को तैयार करते है। अच्छी पैदावार के लिए तैयारी से पूर्व ही 10 टन प्रति

एकड़ के हिसाब से गोबर की खाद (कम्पोस्ट) डालना चाहिए। पहली कटिंग के बाद पुनः पौधों की जड़ों में थोड़ा–थोड़ा गोबर की खाद डालना उपर्युक्त होता है।

विधि

लमेनग्रास बीज तथा स्लीप दोनों ही प्रकार से लगाया जाता है। बीज द्वारा पहले नर्सरी में पौधे तैयार किये जाते हैं। तत्पश्चात् उसे विस्थापित किया जाता है। लेकिन इस विधि को अधिक उपयुक्त नहीं माना गया है क्योंकि बीज से पौधा बनने का प्रतिशत काफी कम होता है। इसलिए ज्यादातर लेमनग्रास की खेती स्लीप द्वारा ही होती है। क्योंकि यही विधि सर्वाधिक उपयोगी, लाभकारी व सुविधाजनक भी है। स्लीप से बीजाई करने के लिए लेमनग्रास के पुराने पौधों/जुट्टों को उखाड़कर उनके साथ लगी अन्य जड़ों के पौधों को अलग–अलग कर एक–एक स्लीप बनाई जाती है। अलग किये गये पौधे ही स्लीप कहलाते हैं जिनका उपयोग प्लांटिंग मैटेरियल के रूप में किया जाता है। एक एकड़ क्षेत्रफल के लिए 12000–15000 स्लीप्स की आवश्यकता होती है जिसकी कीमत 50 पैसे से लेकर 2 रुपये प्रति स्लीप तक होती है। पौधे से पौधों की दूरी 1.5 से 2 फुट तथा लाईन से लाइन की दूरी 2 फुट रखना उचित होता है।

लगाने का समय

गर्मी के मौसम को छोड़कर अगर सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है तो इसे कभी भी लगाया जा सकता है लेकिन इसका उपयुक्त फरवरी–मार्च तथा जुलाई–अगस्त है।

बीजाई की विधि

स्लीप की रोपाई से पूर्व इसके साथ लगी पत्तियां तथा पुरानी जड़ें काट दी जाती हैं। बीजाई के लिए छोटे कुदाल का प्रयोग ज्यादा सुविधाजनक होता है। छोटी कुदाल से 5 से 8 सेंटीमीटर गहरा करके उसमें स्लीप डालकर उसकी जड़ों को अच्छी प्रकार मिट्टी से ढक दिया जाता है। गड्ढे में स्लीप इस प्रकार खड़ा करके लगाना चाहिए कि स्लीप खड़ी रहे और मिट्टी के अंदर उसकी जड़ें मुड़े नहीं। रोपाई के तुरंत बाद खेत में पानी देना चाहिए।

सिंचाई तथा निराई–गुड़ाई

एक बार फसल पकड़ लेने के बाद अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती। फिर भी खेत में बराबर नमी बनी रहे इस बात का ध्यान रखना चाहिए। इसलिए खेत की आवश्यकतानुसार समय–समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्मी के दिनों में 10–15 दिनों के अंतराल पर जबकि जाड़ें में 15–20 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए।

प्रथम वर्ष में प्रत्येक कटिंग के बाद खुरपी से निराई करना चाहिए। इसके बाद में लेमनग्रास का जुट्टा जैसे–जैसे फैलता है घास वैसे–वैसे कम होती जाती है और उनको हाथ से उखाड़ कर फेंकना भी आसान होता है।

प्रमुख बीमारियां

लेमनग्रास की फसल सामान्यतया रोगमुक्त होती है। फिर भी दीमक, कीट व चूहों का प्रकोप कभी–कभी होता है। दीमक का प्रकोप होने पर नीम खली का प्रयोग कर इसकी सुरक्षा की जा सकती है। चूहे इसकी मुलायम पत्तियों तथा शाखाओं को नुकसान पहुंचा

एक एकड़ में लेमनग्रास की खेती से होने वाले आय–व्यय का विवरण

क्र.सं.	खर्च की मद	प्रथम वर्ष	द्वितीय वर्ष	तृतीय वर्ष	चतुर्थ वर्ष	पंचम् वर्ष
1.	भूमि की तैयारी पर व्यय (जुताई आदि)	1,000.00	–	–	–	–
2.	बीज/प्लांटिंग मैटेरियल (15,000/–)	10,000.00	–	–	–	–
3.	गोबर तथा नीम की खाद	2,000.00	2,000.00	2,000.00	2,000.00	2,000.00
4.	निराई–गुड़ाई तथा पानी आदि का खर्च	1,000.00	500.00	500.00	500.00	500.00
5.	प्रक्रियाकरण, पर व्यय	500.00	500.00	500.00	500.00	500.00
6.	(50/– रु. प्रति किग्रा तेल हेतु)	500.00	700.00	700.00	700.00	700.00
	कुल लागत	19,000.00	9,500.00	9,500.00	9,500.00	9,500.00
	कुल प्राप्तियां	40,000.00 100 किग्रा.	60,000.00 150 किग्रा.	60,000.00 150 किग्रा.	60,000.00 150 किग्रा.	60,000.00 150 किग्रा.

सकते हैं इसके लिए किसी भी चूहा मार दवा का प्रयोग कर इसका उपचार किया जा सकता है। ठीक इसी प्रकार इस फसल पर कभी–कभी शूट फ्लाई नामक कीटों को प्रकोप होता है। ये पौधे के तने में घुसकर उसे काट कर अंदर ही अंदर खाते हैं जिससे पौधों की बढ़ोतरी रुक जाती है। लेकिन इन कीटों का प्रभाव अभी केवल दक्षिण भारत में ही देखा गया है इसलिए यह चिंता की बात नहीं है।

उपज प्राप्ति

फसल लगाने के 100–120 दिनों के बाद प्रथम कटिंग का समय होता है। फसल काटते समय भूमि की सतह से 6–7 इंच छोड़कर फसल काटनी चाहिए। प्रथम कटिंग के उपरांत फसल की बढ़ोत्तरी काफी तीव्र गति से होती है और लगभग 70–90 दिनों के पश्चात ही दूसरी कटिंग के लिए फसल तैया हो जाती है। इस प्रकार जैसे–जैसे पौधे मजबूत और फैलते हैं तथा परिस्थितियां अनुकूल मिलती है 60–70 दिनों अंतराल पर कटिंग होती रहती है।

आसवन द्वारा तेल निकालना

आसवन विधि द्वारा इसकी पत्तियों से तेल निकाला जाता है। इस कार्य हेतु एक प्रोसेसिंग यूनिट लगानी पड़ती है जिसकी कीमत लगभग 25000 रुपये है। इसमें एक बड़ा टैंक होता है जिसमें पत्तियों के छोटे–छोटे टुकड़े कर टैंक में डाला जाता है। एक बार टैंक भरने पर पूरी प्रक्रिया में 4–5 घंटे का समय लगता है। छोटा और सस्ता टैंक होने के कारण इसमें तेल प्राप्ति का प्रतिशत कम होता है। आजकल आटोमेटिक आसवन यंत्र भी उपलब्ध हैं जिनकी मदद से आसवन करने पर तेल का अधिकाधिक प्रतिशत प्राप्त होता है क्षमतानुसार इनकी कीमतें अलग–अलग है और महंगे हैं।

प्राप्त तेल की मात्रा

प्रथम वर्ष अपेक्षाकृत तेल कुछ कम निकलता है। पौधे एक वर्ष बाद ही शक्तिशाली और अधिक संख्या में होते हैं इसलिए दूसरे वर्ष से तेल की मात्रा में लगभग 50 प्रतिशत की वृद्धि होती है। प्रथम वर्ष एक एकड़ से 100–110 किलोग्राम तेल की प्राप्ति होती है जबकि आगे के वर्षों में यह बढ़कर 150–170 किलोग्राम तक हो जाता है। लेकिन जैसा कि प्रारंभ में ही कहा गया है कि इसकी पैदावार परिस्थितियां अनुकूल/प्रतिकूल होने पर घट–बढ़ भी सकती है।

लेमनग्रास की खेती से प्राप्तियां

किसी भी नए क्षेत्र में अगर किसी नयी चीज की शुरुआत करनी हो तो लागत मूल्य अधिकतम स्तर पर और लाभ का मूल्यांकन कम से कम स्तर पर करना श्रेयस्कर होता है। क्योंकि आशानुरूप वांछित परिणाम की प्राप्ति नहीं होने से उत्साह में कमी आती है। ठीक इसी आधार पर लेमनग्रास का भी आंकलन किया गया है। लेमनग्रास की फसल से प्रति वर्ष प्रति एकड़ से 100 किलोग्राम तेल प्राप्त किया जा सकता है जिसका वर्तमान बाजार भाव 450–475 रुपये की प्राप्ति होती है और यह लाभ आगे के वर्षों में क्रमशः 60,000 रुपये तक होगा। अगर लागत मूल्य प्रथम वर्ष में 20,000 रुपये निकाल दिया जाए तो 20,000 रुपये की शुद्ध प्राप्ति होती है।

अगले वर्षों से लागत खर्च केवल 10,000 रुपये के आसपास होगी अर्थात कम हो जाएगी और तेल प्राप्ति की मात्रा बढ़ जाएगी जो लगभग 60,000 से 1 लाख रुपये तक हो सकती है। इस प्रकार दूसरे वर्ष से लेकर पांच वर्षों तक 50,000 रुपये प्रति एकड़ की प्राप्ति लगातार होती रहेगी। अगर हम परंपरागत खेती की बात करें तो शायद ही कोई ऐसी फसल हो जो मात्र एक एकड़ भूमि से इस प्रकार का लाभ दे सकें। इसके साथ ही यहां यह बताना भी उचित होगा कि इसमें खरपतवार का नहीं होना, पशुओं द्वारा कोई नुकसान नहीं और इसके अच्छे बाजार और अच्छी कीमत मिलने के कारण लेमनग्रास की खेती करना व्यावसायिक दृष्टि काफी लाभदायक व्यवसाय सिद्ध हो रहा है।

इस प्रकार औसतन आकलन किया जाए तो सभी खर्चों को काटने के बाद पांच वर्षों में लगभग 2 लाख रुपये अर्थात 40,000.00 रुपये सालाना का प्रति एकड़ लाभ मिलता है। समय के साथ–साथ क्षेत्रफल अधिक बढ़ाने पर (दो एकड़) यह लाभ 80,000.00 रुपये प्रतिवर्ष या इससे भी अधिक हो सकता है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/ चाहती हूं/ चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 70 रुपये, दो वर्ष के लिए 135 रुपये, तीन वर्ष के लिए 190 रुपये का
(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) .....

पता .....

.....

पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

सहायक प्रसार प्रबंधक, प्रकाशन विभाग,
पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066

*कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर **निदेशक, प्रकाशन विभाग** को नई दिल्ली में देय हो।*

हर्बल राज्य में बदलता उत्तरांचल

देवेंद्र उपाध्याय

उत्तरांचल सदियों से जड़ी–बूटियों के लिए विख्यात रहा है। 'रामचरितमानस' में लक्ष्मण मूर्छा को दूर करने के लिए हनुमान द्वारा जिस संजीवनी को ले जाने का वर्णन है, वह संजीवनी द्रोण पर्वत से ले जायी गई मानी जाती है। द्रोण पर्वत (इनागिरी) द्वाराहाट के ऐतिहासिक पांडवकालीन अवशेषों के लिए विख्यात है और उत्तर द्वारका के रूप में इसकी महत्ता है। उत्तरांचल में अनेक दुलर्भ जड़ी–बूटियां भी पाई जाती रही हैं जो पारंपरिक काल से आयुर्वेदिक चिकित्सा का आधार रही हैं। जिनकी ख्याति एशिया और यूरोप के अनेक देशों में रही है।

च्यवन, चरक, सुश्रुत और जीवक आदि अनेक ऋषि–मुनियों व वैद्यों ने जिस आयुर्वेदिक पद्धति को जड़ी–बूटियों के मिश्रण से जीवनदायी बनाया उसका आधार उत्तरांचल ही रहा है। कहा जाता है कि हिमालय क्षेत्र में लगभग 800 जड़ी–बूटियां पाई जाती रही हैं, जिनमें से आज अनेक दुर्लभ और लुप्त प्राय हो चुकी हैं। उत्तरांचल राज्य बनने के बाद उत्तरांचल में जड़ी–बूटियों की खेती को बढ़ावा देने के रूप में इसकी पहचान बने। इससे जड़ी–बूटियों को लुप्त होने से बचाने में तो मदद मिलेगी ही, साथ ही छोटी और बिखरी जोत वाले किसानों को भी रोजगार के वैकल्पिक अवसर मिलेंगे। हिमालय की जड़ी–बूटियों की अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भारी मांग के साथ–साथ अधिक मूल्य भी है। सन् 2000 के बाद राज्य में अलग–अलग जलवायु क्षेत्रों में जड़ी–बूटियों को लुप्त होने से बचाने के लिए सरकारी और गैर–सरकारी प्रयासों के उत्साहवर्द्धक परिणाम सामने आये हैं।

उत्तरांचल में स्व–सहायता समूहों के गठन से भी जड़ी–बूटियों की खेती को बड़े पैमाने पर बढ़ावा मिला है। उत्तरांचल सरकार ने

जड़ी–बूटी शोध एवं विकास संस्थान के अंतर्गत देहरादून के निकट सेलाकुई में सुगंध पौधा केंद्र की स्थापना की है। संस्थान आधुनिक कृषि तकनीक और हिमालय की बहुमूल्य औषधियों एवं सुगंधित पौधों के सरंक्षण तथा अनंतकाल तक उनके उपयोग की आवश्यकताओं में समन्वय बनाने का काम कर रहा है। 15 अगस्त 2003 को डेढ़ एकड़ क्षेत्र में 11 किस्मों की नर्सरी के साथ शुरू केंद्र ने अल्प अवधि में ही अपनी पहचान बना ली है। जेरेनियम, सिट्रोनेला, लेमन ग्रास, पीपरमेंट, स्पिरमेंट, जापानीमिंट मेट्रीकेरिया, एकोरस आदि विभिन्न किस्म के 22 संगधी और औषधीय पौधों का उत्पादन प्रदर्शन केंद्र में किया जा रहा है।

किसानों के मार्गदर्शन के लिए केंद्र के कृषि अनुसंधान अधिकारी और शोध अधिकारी ने पुस्तिकाएं तैयार की हैं, जिनमें विभिन्न जड़ी–बूटियों की विस्तृत जानकारी दी गई है। कृषक सूचना बुलेटिन शृंखला में हर्बल उत्तरांचल के अंतर्गत वर्तमान मार्केट परिदृश्य भी तैयार किया गया है। जिसमें आयुर्वेदिक फार्मेसियों द्वारा खरीदी जाने वाली जड़ी–बूटियों तथा उनकी न्यूनतम दरों हर्बल ट्रेडर्स एवं फार्मेसी की जानकारी दी गई है।

सुगंध पौधा केंद्र के अस्तित्व में आने के बाद बीज–पौध, तेल बिक्री आदि के बारे में किसानों को मार्गदर्शन मिलने लगा है। सुगंध से समृद्धि के अभियान के बारे में अनुसंधान अधिकारी ने विस्तृत जानकारी दी। उन्होंने बताया कि केंद्र द्वारा सुगंध पौधों के कृषिकरण, प्रसंस्करण एवं गुणवत्ता संबंधी परामर्श एवं तकनीकी सेवाएं उपलब्ध कराने, प्रसंस्करण हेतु आसवन सुविधा उपलब्ध कराने, सुगंधित तेलों की गुणवत्ता परीक्षण सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। कृषकों और उद्यमियों को प्रशिक्षण देकर सुगंध पौधों की खेती के लिए सहायता एवं मार्गदर्शन भी दिया जाता है।

केंद्र द्वारा सुगंधि पौधों के प्रसंस्करण हेतु 29 क्लस्टर विकसित किए जा रहे हैं। हर

क्लस्टर में 600 किसानों एवं उद्यमियों को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था है। जलवायु के अनुसार क्लस्टर में उपयुक्त जड़ी–बूटियों के पौधे लगाए जा रहे हैं। लेमन ग्रास और पामरोजा बंजर भूमि के लिए सबसे उपयुक्त हैं डेमस्क रोज (नूरजहां किस्म का गुलाब) का तेल तो दो से ढाई लाख रुपये किलो के भाव बिकता है। सिट्रोनेला का तेल मच्छर भगाने का अचूक नुस्खा है। खस बंजर भूमि में उगने वाला हरा सोना है।

केंद्र ने प्रोसेसिंग के लिए मशीनरी का डिजाइन तैयार कर चार डिस्टीलेशन यूनिटें भी स्थापित की हैं। बिना बिजली के पन ऊर्जा से भी इन यूनिटों को चलाया जा सकता है। दो बार में विस्तार कार्यक्रम के अंतर्गत 43 किसानों में 135.86 एकड़ क्षेत्र में सुगंध पौधों की खेती शुरू की है। जबकि 121 छोटे किसान अपनी 30.25 एकड़ जोत में अलग–अलग किस्म सुगंधि पौधों की खेती कर रहे हैं। प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत सितंबर 2003 से जुलाई 2004 तक नौ प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित किए गए जिनमें 548 को प्रशिक्षण दिया गया। इसी अवधि के दौरान विभिन्न जड़ी–बूटियों के 12.42 लाख पौधे तथा 52 कि.ग्रा. बीजों की आपूर्ति किसानों को की गई।

विभिन्न हर्बल बीजों के तेल की वाणिज्यिक संभावनाओं को ध्यान में रखते हुए उन पर अनुसंधान एवं विकास कार्य किया जा रहा है। ऐसे 21 पौधों में चीड़, देवदार और तिमूर के बीज भी शामिल हैं। स्टीविया प्राकृतिक रूप से शुगर फ्री है, जो मधुमेह के रोगियों के लिए उपयुक्त है। उत्तरांचल में पहली बार इसकी खेती को बढ़ावा देने के साथ ही केंद्र में प्रसंकरण इकाई स्थापित की जा रही है। अगले वर्ष इसमें उत्पादन शुरू होने की संभावना है। स्मृति को बनाए रखने वाली औषधियों में नागर मोथा की खेती को बढ़ावा देने के लिए भी कार्य हो रहा है। सेलाकुई केंद्र में किए गए अनुसंधान के परिणाम बहुत उत्साहवर्द्धक रहे हैं और अनुसंधान से यह बात सामने आई है कि मैदानी क्षेत्रों में भी जेरेनियम की खेती की जा सकती है।

उत्तरांचल में लगभग 100 आयुर्वेदिक फार्मेसी हैं जिनमें सौ जड़ी–बूटियां विभिन्न किस्म की आयुर्वेदिक दवाइयां बनाने के काम

में आती हैं स्वास्थ्य मंत्रालय, भारत सरकार की आयुर्वेदिक फार्मेसी आईएमपीसीएल, मोहान (अल्मोड़ा) में 103 से भी अधिक जड़ी–बूटियां खरीदी जाती है। जिनका उपयोग कई तरह की भस्म, टेबलेट, चूर्ण, रस व बटी, कैप्सूल और रसायन एवं सिरप आदि में किया जाता है।

हिमालय क्षेत्र में पायी जाने वाली अनेक विशिष्ट जड़ी–बूटियां, कूट, कस्तूरी, चमर दुग्ध, गुग्गल और भोजपत्र आदि सब इतिहास की स्मृतियां बनती जा रही हैं। दुर्लभ क्षेत्रों में जड़ी–बूटियों का सही तरीके से दोहन नहीं हुआ जबकि सुगम क्षेत्रों में इनका अंधाधुंध दोहन होने से ये विनाश के कगार पर पहुंच चुकी हैं। आयुर्वेदिक के अलावा कई एलोपैथिक, यूनानी और होम्योपैथिक औषधियों में जड़ी–बूटियों का उपयोग होता है। उत्तरांचल में करीब 35 जड़ी–बूटियों विलुप्त होने की स्थिति में हैं। अब करीब 33 वनोषधियों के रोपण के लिए राज्य सरकार योजना शुरू कर दी है। औषधीय वृक्षों साल, सागौन, शीशम, ढाक, खैर, हल्दू, कदम, काफल, थुनेर, पांगर, जामुन, सिलौंज, देवदार, मेहल, कैल, अखरोट, भोजपत्र, रिंगाल, उत्तीस, कचनार, हरड़, बेहड़ा, आंवला, अमलतास, सुरई, दूप (जुनीपर), रिंगाल, अरंडी, कागजी नीबू, नीबू, दाल चीनी आदि हैं, जिनके अलग–अलग हिस्सों (छाल, पत्ती, बीज, जड़) का उपयोग होता है। अनेक औषधीय सुगंध पौधों तथा वृक्षों के बीजों का तेल अनेक उत्पादों में प्रयुक्त होता है।

उत्तरांचल को हर्बल राज्य बनाने की संभावनाएं बेहतर हैं। हर्बल के उत्पादन से किसानों के लिए अपनी अर्थव्यवस्था को बेहतर बनाने के अवसर प्राप्त होंगे। कृषि उत्तरांचल में पूरी तरह भगवान भरोसे है जिसका विकल्प जड़ी–बूटियों के उत्पादन में खोजने की ललक अब बढ़ने लगी है। स्वयंसेवी समूहों के माध्यम से अनेक स्वयंसेवी संगठन भी इस कार्य को बढ़ावा देने में जुट गए हैं। उत्तरांचल में जड़ी–बूटी योजना के अंतर्गत जड़ी–बूटी व्यवसाय का लक्ष्य 490 लाख निर्धारित किया गया है और 120 लाख रुपये का व्यवसाय संभव हुआ है। औषधीय एवं सुगंध पादपों के निर्यात क्षेत्र के अंतर्गत अनेक योजनाओं को मूर्त रूप दिया जा रहा है।

उत्तरांचल के जड़ी–बूटी शोध एवं विकास संस्थान ने वन विभाग, उद्यान विभाग, सहकारिता विभाग तथा स्वयंसेवी संगठनों के सहयोग से औषधीय एवं सुगंध पौधों के समग्र विकास हेतु कार्य योजना भी शुरू की है, जो राज्य को हर्बल राज्य बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है। जड़ी–बूटी कृषिकरण के लिए पांच वन में 800 नर्सरियों की स्थापना कर एक हजार किसानों को प्रशिक्षण देने का लक्ष्य निश्चित रूप से कारगर सिद्ध होगा। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

विलुप्त परंपरा को नया जीवन

हमीदुल्लाह डार

कश्मीर घाटी का सांस्कृतिक अतीत बड़ा ही गौरवशाली रहा है, और उसकी कला के विविध रूपों को दुनियाभर में सम्मान मिला है। यहां की राजनीतिक सरगर्मियां भी उसी तरह हलचलों से भरी रही हैं और कालांतर में उनका प्रभाव सांस्कृतिक गतिविधियों पर पड़ा है। समकालीन कला भी इतिहास के इस उतार–चढ़ाव से अछूती नहीं रही है। कला के विभिन्न स्वरूपों पर यह छाप स्पष्ट देखी जा सकती है और यह भावी पीढ़ियों के लिए एक जीता–जागता इतिहास है। विदेशी शासकों द्वारा लूटपाट, सामजिक कुप्रथाओं, चालाक जागीरदारों के अत्याचारों और निर्दोष लोगों की पीड़ा कला की विविध विधाओं में समाहित होती चली गई, जो धीरे–धीरे इन घाटीवासियों के लिए एक अनमोल खजाना बन गई।

पिछले आठ सौ वर्षों में घाटी में कला की जो उत्कृष्ट विधाएं फली–फूलीं, उनमें से एक है **भांड पा–थर,** जो लोगों के लिए शिक्षाप्रद मनोरंजन का एक बढ़िया जरिया बनी हुई है। सत्ताधारी वर्ग की वजह से कई मुसीबतें झेलने के बावजूद, **भांड पा–थर** कला ने बदलते सामाजिक परिवेश और राजनीतिक परिदृश्य को आत्मसात तो किया ही, लेकिन उसने अपनी मूल भावना नहीं खोई। जैनुल अबिदीन (1420–70) के शासन काल में इस कला को राजघरानों का संरक्षण मिला।

भांड पा–थर का किसी धर्म विशेष के प्रति कोई झुकाव नहीं है और यह पूरी तरह से एक धर्मनिरपेक्ष विधा है। **भांड पा–थर** की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें महिला पात्रों की भूमिका पुरुष निभाते हैं। भांड, अभिनेता या विदूषक को कहते हैं और **पा–थर** का अर्थ नाटक होता है। इस प्रकार **भांड पा–थर** एक ऐसा नाटक होता है जिसका मंचन विदूषक करते हैं और इसमें आमतौर से चुभने वाला व्यंग होता है। **भांड पा–थर** के तीन अंग होते हैं– ढोल बजाना (कश्मीरी में **वायुन**), नाचना (नत्सून) और अभिनय करना (**पा–थर चारून**)। जिन वाद्य यंत्रों का उपयोग होता है, उनमें स्वरनाई बांसुरी, ढोलकी और नगार (अर्ध चंद्राकार ढोलकी) शामिल है। कुछ कलाकार **साज़ी कश्मीर** का इस्तेमाल भी करते थे, लेकिन बाद में इसे छोड़ दिया गया। हरेक **पा–थर** की अपनी अलग धुन होती है, जिसकी वजह से यह अलग से पहचाना जाता है। ये एक दूसरे से विषय वस्तु में ही नहीं, बल्कि संगीत में भी भिन्न होते हैं। विभिन्न धुनों पर भांड अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। **भांड पा–थर** की एक विशिष्ट शैली होती है, जिससे होता हुआ यह प्रदर्शन अपने चरमोत्कर्ष (क्लाईमेक्स) तक पहुंचता है।

चरमोत्कर्ष तक पहुंचने से पहले पा–थर तेरह स्तरों से गुजरता है। ये स्तर हैं **का–अर, स्वरनाई, त्छोक, नत्सून, मसखरी, कुर्र, बांथ, गे–उन, हुर, बोली, मज़ाख, अदाकारी, कसी–वालिन** और दुआई खैर। **दुआई खैर** से शुरू होकर, **पा–थर** उसी पर खत्म होता है।

का–अर में ढोल बजाकर दर्शकों को आमंत्रित किया जाता है और उन्हें घेरे में बैठाया जाता है। संस्कृत नाटकों में सूत्रा धार की तरह, यहां **का–अरदार** होता है। शहनाई की तरह का वाद्य यंत्र **स्वरनाई** बजाना, **पा–थर** का दूसरा हिस्सा होता है। कलाकार, दर्शकों के घेरे के बीच पहुंच कर तरह–तरह की धुन बजाते हैं। उसके साथ ढोलकी और नगार (नगाड़ा) बजाने वाले होते हैं। बजाई जाने वाली विभिन्न धुनों में **सलाम, थू–र, दु–अब नौपत** और **सैलगाह** नामक विभिन्न धुनें शामिल होती हैं। स्वरनाई वादन के दौरान, विदूषक **पा–थर** की विषय वस्तु के मुताबिक, वेशभूषा में घेरे में प्रवेश करते हैं। अगला हिस्सा त्छोक का है जिसे **पा–थर** का प्रमुख हिस्सा माना जाता है। **त्छोक,** विभिन्न तरह के नृत्यों का समूह है जिसमें हर नृत्य विशेष धुन और लय पर किया जाता है। **त्छोक** अक्सर संध्याकाल में किया जाता है। **त्छोक** के कई रूप हैं जिनमें बोड़आरि (बड़े घेरे), **लकुट आरि** (छोटे घेरे) **इकवट नत्सून** (एक साथ उछलना), **ब्योन ब्योन नत्सून** (अकेले उछलना) **थू–राऊ, सै–ल** और **रू–श आते** हैं।

नत्सून, उछलना, अपरिष्कृत नृत्य की आनोखी शैली है जो आरंभ से ही **भांड पाथर** में शामिल है। **नत्सून** करते हुए स्वांग भरने की भंगिमाएं इस नृत्य शैली विशेष की **जान** और **पहचान** हैं। **नत्सून** के दौरान जो लयात्मक धुनें बजाई जाती हैं, कला की दृष्टि से वे बहुत ऊंची मानी जाती हैं। **पा–थर** के इस हिस्से के मंचन के समय दर्शक खड़े होकर तालियां बजाने लगते हैं। **मागुन** या प्रमुख भांड दर्शकों से दान मांगता है और सभी दर्शक जो कुछ बन पड़ता है, उसे देते हैं। इसके बाद सब लोग रात के भोजन के लिए चले जाते हैं। यह **पा–थर** में एक तरह का मध्यांतर होता है।

भोजन से तृप्त होने के बाद दर्शक और थके हुए भांड तरातोज़ा हो जाते हैं। अब वादक अपनी–अपनी जगह बैठ जाते हैं **स्वरनाई** बजाना शुरू करते हैं। दर्शक फिर घेरा बनाकर बैठ जाते हैं और **पा–थर** आगे बढ़ता है। **पा–थर** में मसखरे या विदूषक का महत्वपूर्ण स्थान होता है। उसके घेरे में आते ही, दर्शक हंसते–हंसते लोट–पोट हो जाते हैं क्योंकि उसका वेश देखते ही हंसी फूट पड़ती

है। उसके हाव–भाव बड़े ही विनोदपूर्ण होते हैं। फुदनों वाली रंग बिरंगी टोपी लगाए, विदूषक घाघरा पहनकर बंदर की तरह यहां से वहां कूदता–फांदता रहता है। वह किसी भी दर्शक का मज़ाक उड़ाने लगता है, जिससे उपस्थित दर्शक आनंदित होते हैं वह **पा–थर** के प्रमुख पात्र पर भी व्यंग्य करता है, जिसके लिए उसे अक्सर कोड़े खाने पड़ते हैं।

कुर्र का मतलब कोड़ा होता है, जो मसखरे पर बरसाया जाता है। **बांथ** (बांस) तो इतना मशहूर हो गया है कि अब तो उसकी उपमा दी जाने लगी है। उबासी लेने वाले दर्शकों का ध्यान खींचने के लिए लंबाई में फटा यह बांस, दर्शकों के सिर पर मारा जाता है। **बोलई** या बोली तो **पा–थर** में छोंक का काम करती है, क्योंकि इसमें दूसरी भाषाओं के शब्दों को कश्मीरी भाषा के वाक्यों में इस तरह पिरोया जाता है, जिसे सुनकर दर्शक ठहाके लगाने लगते हैं। **मजाख़** भी पा–थर का एक अहम हिस्सा होता है, और विदूषक दर्शकों के साथ–साथ अपना भी **मज़ाक** उड़ाते हैं। **अदाकारी** या भांड़ों का अभिनय भी अपने में लाजवाब होता है। ऐसा लगता है कि वे पैदाइशी कलाकर हैं और उनसे जरा सी भी भूल नहीं हो सकती है। **दुआएं–खैर,** पा–थर का अंतिम चरण होता है और भांड दुआए खैर तो अब एक मुहावरा सा बन गया है।

पहले **पा–थर,** रात के पहले पहर में शुरू होता था, और यह भोर तक चलता था, लेकिन बदलते वक्त के साथ–साथ **पा–थर** अब शाम ढलते ही पर शुरू हो जाता है।

राज्यों में आतंकवाद के शुरू होने के कारण **मांड पा–थर** की कला लुप्तप्राय हो गई थी ओर नई पीढ़ी इसके बारे में कुछ भी नहीं जानती थी, क्योंकि इनका प्रदर्शन ही नहीं होता था। भांडों की आबादी कुल 10,000 है और वे कश्मीर घाटी में फैले 72 गांवों में रहते हैं। पेट भरने के लिए उन्होंने दूसरे काम शुरू कर दिए हैं। इनमें से कुछ कांगड़ी बनाने का काम करते हैं, तो कुछ मांगने पर मजबूर हो गए हैं।

इस नई शताब्दी में भांडों के लिए आशा की किरण फिर से फूटी है। घाटी के हालात में सुधार आया है और कलाकारों पर हमले अब लगभग नहीं के बराबर हैं। इससे भांडों के लिए अपना दल दोबारा बनाने और जहां मौका मिले, अपनी कला का प्रदर्शन करना आसान हो गया है। पहले, अस्सी के दशक में, शादी ब्याह के कार्यक्रम बगैर **मांड पा–थर** के अधूरे माने जाते थे। ये अब फिर से भांडों की पहली पसंद बनते जा रहे हैं।

मिसाल के तौर पर इस साल, भगत थियेटर ने 25 से ज्यादा शो में अपनी कला का प्रदर्शन किया, और सबसे अहम बात यह है कि इन्हें बड़ी तादाद में लोग देखने के लिए आए। हालांकि राज्य सरकार ने भांडों को सुरक्षा देने का प्रयास किया था, लेकिन भांडों ने यह कहकर सुरक्षा लेने से इंकार कर दिया कि वे अपने लोगों के बीच हैं और सुरक्षा के तामझाम से कलाकार दर्शकों के बीच दीवार पैदा हो जाएगी।

अगर हालात बेहतर होते गए, तो भांडों और कश्मीर के लोक नाटकों के दिन फिर से लौट आएंगे। ❑

(लेखक श्रीनगर स्थित पत्रकार हैं)

(पृष्ठ 15 का शेष)

पर्यावरण प्रदूषण ...

के लिए तेजी से प्रयास करें।

- सरकार को प्लास्टिक की थैलियों के प्रयोग पर पूर्णतया रोक लगा देनी चाहिए तथा इनका प्रयोग करने वाले व्यापारियों पर कानूनी कार्यवाही की जानी चाहिए।
- मनुष्य को धूम्रपान की आदत से बचना चाहिए। यदि वह इसका आदी हो भी गया है और इससे बच पाना संभव नहीं हो तो अन्य व्यक्तियों के पास धूम्रपान नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे धूम्रपान न करने वाले व्यक्तियों के स्वास्थ्य पर भी 30 प्रतिशत तक हानि पहुंचती है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में आस–पास के खुले स्थानों पर शौचादि करने से प्रदूषण फैलता है अतः इस प्रवृत्ति को रोका जाना चाहिए। इसके लिए कम खर्च में स्वच्छ शौचालय बनवाये जा सकते हैं तथा इसके लिए सरकार द्वारा सहायता प्रदान की जाती है। इसके विषय में अधिक जानकारी के लिए ग्रामीण विकास अधिकारी अथवा ग्राम पंचायत अधिकारी से संपर्क करना चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रों में जहां आज भी नल नहीं है और पानी पीने के लिए कुओं पर निर्भरता है वहां कुओं के पानी को कूड़ा–करकट तथा प्रदूषण से बचाने हेतु उचित प्रबंध किया जाना चाहिए। प्रत्येक माह में एक बार उसमें पोटेशियम परमैग्नेट अथवा ब्लीचिंग पाउडर अवश्य डालना चाहिए ताकि कुएं के पानी को शुद्ध रखा जा सके।
- पर्यावरणीय शिक्षा को औपचारिक और गैर औपचारिक शिक्षा हेतु स्वयं सेवी संगठनों का सहारा लिया जा सकता है। समय–समय पर प्रदर्शनियों एवं परिचर्चाओं का आयोजन किया जाना चाहिए तथा पर्यावरण से संबंधित जुड़े लोगों को ओरियेंटेशन कार्यक्रम चलाकर जानकारी प्रदान की जानी चाहिए।

हाल ही के वर्षों में पर्यावरण के प्रति सभी देशों में जागरूकता बढ़ी है। सरकार स्वयं भी पर्यावरण प्रदूषण के प्रति चिंतित है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा भी पुराने वाहनों पर नियंत्रण, कारखानों को शहरी क्षेत्र से बाहर ले जाने संबंधित आदेश विगत वर्षों में निर्गत किये गये हैं। सरकार द्वारा पर्यावरण के संबंध में काफी कड़े कानून बनाये गये हैं, आवश्यकता उनका पालन सुनिश्चित करने की है। औद्योगिक क्षेत्र में प्रदूषण की माप समय–समय पर करायी जानी चाहिए इन सबके बावजूद पर्यावरण संरक्षण के लिए हमें प्रयास करने होंगे और अपने आस–पास के पर्यावरण को संतुलित, संरक्षित एवं स्वच्छ रखना होगा। पेड़ों को यदि हम काटते हैं तो उनके स्थान पर नये पेड़ लगाने होंगे। पर्यावरण संरक्षण में संबंधित जानकारी अखबारों, रेडियो एवं टेलीविजन के माध्यम से आम जनता तक पहुंचानी होगी। जनसंख्या वृद्धि के प्रति भी यदि लोगों को सचेत न किया गया तो हमारे सारे प्रयास निष्फल हो जायेंगे। अतः वक्त रहते पर्यावरण से संबंधित समस्याओं के प्रति लोगों में जागरूकता पैदा करनी होगी अन्यथा हमें अपना अस्तित्व खोने में देर नहीं लगेगी और हमारा आधुनिक विकास नवीनतम तकनीकी एवं प्रौद्योगकी ज्ञान, वैज्ञानिक प्रगति का परिणाम भयावह रूप धारण कर लेगा। ❑

(लेखक द्वय साहू जैन कालेज, नजीबाबाद के वाणिज्य विभाग में क्रमशः वरिष्ठ प्रवक्ता और शोधार्थी हैं।)

योग के वैज्ञानिक पहलू

डा. एम. के. मुछाल

योग का प्रादुर्भाव एवं विकास भारत में हजारों वर्ष पहले हुआ। इसके संस्थापक महर्षि पतंजलि थे। महर्षि पतंजलि तथा अनेक योगियों–मनीषियों ने योग की अपने तार्किक ढंग से व्याख्या कर उसको व्यावहारिक रूप से प्रत्येक व्यक्ति के लिए सुलभ बनाने हेतु वैज्ञानिक आधार प्रस्तुत किया। आज योग केवल आश्रम में रहने वाले साधुओं, संतों तक ही सीमित नहीं रहा है। पिछले कुछ दशकों से लोगों में योग के प्रति आस्था बढ़ी है तथा इसे विज्ञान ने भी स्वीकार किया है।

आज के युग में व्यक्ति की दिनचर्या इतनी आराम पसंद है कि अधिकतर कार्यों को करने के लिए मशीनों का सहारा जाता है। जैसे कुछ दूर पैदल जाना हो तो वह वाहन से जाता है। ऐसी स्थिति में शारीरिक श्रम उतना नहीं हो पाता। इस आराम तलब जिंदगी के कारण मनुष्य सामान्य रोगों के साथ–साथ कई गंभीर बीमारियों को आमंत्रित करता है। जैसे हृदय रोग, मोटापा, मधुमेह, उच्च रक्तचाप, तनाव, डिप्रेशन (मानसिक अवसाद) आदि।

योग का अर्थ

संस्कृत में योग का शाब्दिक अर्थ 'जोड़ना' है अर्थात योग आत्मा को सर्वव्यापक परमात्मा से जोड़ने के साधन के रूप में परिभाषित किया जाता है।

पतन्जलयोगप्रदीप के अनुसार योग का अर्थ *योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः* अर्थात चित्त वृत्तियों का निरोध करना ही योग है।

शुद्ध निर्विकार निरोग और स्वस्थ्य शरीर के बिना योग साधना कठिन है इसलिए शारीरिक शुद्धिकरण के लिए शरीर शोधन तथा शारीरिक विकारों को दूर करने हेतु षठ्कर्म है। इन छः कर्मों का आचरण योगी के लिए आवश्यक है ये कर्म, धौति, वस्ति, नेति, नौलि (लौलिकी), त्राटक और कपालभांति है।

योग – वेद दर्शन की छः पद्धतियों में से महर्षि पतजंलि ने 'पतंजलियोगसूत्र' में योग के आठ अंगों का वर्णन किया जिन्हें अष्टांग योग कहते हैं। ये हैं – यम–नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि।

यम – अष्टांग योग का पहला अंग है इससे आशय जिस अनुष्ठान से मन, इन्द्रियों तथा हिंसादि अशुभ भावों को हटाकर आत्म केंद्रित किया जाए। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रहम्चर्य, और अपरिग्रह ये 5 नियम हैं।

नियम – इसमें 5 आत्मशोधन के नियम हैं – शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर, प्रणिधान आदि।

आसन – किसी आसन में स्थिरता और सुखपूर्वक बैठना आसन कहलाता है ये आसन पद्मासन, सुखासन एवं सिद्धासन है।

प्राणायाम – आसन के सिद्ध होने पर श्वास–प्रश्वास की गति को नियंत्रित करना प्राणायाम है।

प्रत्याहार – इन्द्रियों पर पूर्ण अधिकार होना, उन्हें विषयों के प्रति आसक्ति से रोकना है।

धारणा – किसी एक स्थान पर मन का निग्रह या एकाग्र होना धारणा कहलाता है।

ध्यान – धारणा के द्वारा किए गए अर्थात् नाभिचक्र, हृदय, भूमध्य में ध्येय रूप परमेश्वर में एकतानता ध्यान है।

समाधि – ध्यान जब केवल ईश्वर के स्वरूप या स्वभाव को प्रकाशित करने वाला अपने स्वरूप से शून्य जैसा हो तो उसे समाधि कहते हैं।

शरीर को पूर्ण स्वस्थ रखने के लिए भोजन और जल का महत्व है उतना ही प्राणायाम एवं योग साधना का है। आज प्रत्येक व्यक्ति स्वस्थ, बलवान, चुस्त, फुर्तीला एवं स्मार्ट दिखना चाहता है। इसके लिए व्यक्ति को बहुत अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं है अपितु हर रोज की आवश्यकता पर ध्यान देकर योग और प्राणायाम और योग का आश्रय ले तो व्यक्ति सहज ही कई प्रकार की व्याधियों एवं भविष्य में होने वाली व्याधियों से भी

मुक्ति पा सकता है।

प्राणायाम में श्वास प्रश्वास की गति तीव्र होने से रक्त संचार तीव्र होता और शरीर की आंतरिक सफाई ठीक तरह से हो जाती है एवं त्वचा के सभी रोम छिद्र खुल जाते हैं। श्वास प्रक्रिया की क्रिया द्वारा विजातिया पदार्थ (anti-oxidant) बाहर निकल जाते हैं। इस प्रकार शरीर को अन्य कई प्रकार के लाभ होते हैं।

- प्राणायाम से अनेक व्याधियों से रक्षा होती है।
- हृदयघात की संभावना कम हो जाती है।
- उच्च रक्तचाप की समस्या से मुक्ति मिलती है।
- हृदय संवहनी नलिकाओं को बल मिलता है।
- मानसिक एकाग्रता एवं सर्तकता की शक्ति में वृद्धि होती है।
- शरीर को आराम मिलने से अनिद्रा, बेचैनी, तनाव तथा डिप्रेशन दूर होता है।
- शारीरिक शक्ति, एवं चुस्ती–फुर्ती में वृद्धि होती है।
- अस्थमा, मधुमेह, मोटापा, गठिया, कमर दर्द आदि रोगों से मुक्ति मिलती है।
- पेट पूर्ण रूप से स्वस्थ होता है।

उपर्युक्त लाभ प्राणायाम एवं कुछ आसनों के द्वारा प्राप्त होते हैं। यह लाखों लोगों का अनुभव हैं।

योगासनों के संबंध में देश–विदेश में कई शोध कार्य चल रहे है। ये केवल अंग–संचालन की सामान्य प्रक्रिया ही न रहकर कई अर्थों में सिद्ध हो रहे हैं।

"मैन मस्ट बी हैल्दी" पुस्तक में स्वस्थ रहने के लिए यौगिक श्वसन क्रिया (प्राणायाम) का परामर्श दिया है।

बालकों के उपचार हेतु सरल एवं साधारण योगासनों को करने से उपचार में विशेष सफलता मिलती है।

रोगियों का उपचार करने में यौगिक क्रियाओं को आशातीत रूप से सफल पाया गया है। दमा (अस्थमा) से पीड़ित व्यक्तियों को दवाई की अपेक्षा प्राणायाम क्रिया का अभ्यास कराया गया। परिणामस्वरूप उनके शरीर में प्रवेश करने वाली आक्सीजन और कार्बन डाईऑक्साइड के मध्य अंसतुलन दूर हो गया और दमा रोगियों को इससे लाभ हुआ। साथ ही मिर्गी, उच्च रक्तचाप एवं हृदय रोगों पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ा है।

मधुमेह में योग का योगदान का अध्ययन व अनुसंधान किया जा रहा है। इस अनुसंधान में विभिन्न आयु वर्ग के 283 मधुमेह रोगियों पर यौगिक ट्रीटमेंट रिसर्च सेंटर संस्थान में तीन माह तक प्रयोग किया गया। प्रयोग के दौरान रोगियों को संतुलित भोजन के रूप में 98 प्रतिशत वसा, 400 ग्राम कार्बोहाइड्रेट, 100 ग्राम प्रोटीन और 2900 कैलोरी नियमित रूप से प्रदान कर समय – समय पर उनका भार मूत्र, रक्त में ग्लूकोज की मात्रा का परीक्षण तथा हृदय का ई.सी.जी. द्वारा परीक्षण किया।

रोगियों को प्रतिदिन सुबह शाम सर्वांगासन, हलासन, मयूरासन, पाद हस्तासन, उत्तान – पादासन, शीर्षासन, जानुसिरासन, पवनमुक्तासन, शवासन आदि आसनों के साथ भजन–पूजन व ध्यान–साधना कराये गए। तीन महीने पश्चात परिणाम में पाया गया कि 52 प्रतिशत रोगी लाभान्वित हुए। अधिकांश पूर्ण स्वस्थ हो गये तथा कुछ जिन्हें अल्प लाभ पहुंचा या ठीक नहीं हुए जो जन्म से ही कमजोर अथवा लंबी अवधि से बीमार थे।

'योग एन्ड दी हार्ट लेख' "योग लाइफ" में प्रकाशित हुआ जिसमें हृदय रोगियों पर आसनों के प्रभाव तथा उच्च रक्तचाप के रोगियों जिन्हें मेडिकल चिकित्सा से लाभ नहीं हुआ उन पर अध्ययन में पाया कि जिनका रक्तचाप और हृदय कमजोर था उनको शवासन में पैर के नीचे तकिया लगाने पर आराम मिला। तथा जिनके हृदय मजबूत थे उन्हें उपर्युक्त में से हलासन, सर्वांगासन, विपरीत करणी मुद्रा का अभ्यास कराया। अभ्यास के पश्चात् रोगियों को अधिक स्फूर्ति एवं शक्ति का अनुभव हुआ और पहले की अपेक्षा गहरी नींद आने लगी।

हृदय रोगियों पर शवासन और ध्यान का सकारात्मक प्रभाव पाया गया है।

शीर्षासन पर वैज्ञानिक प्रयोग किए जा रहे हैं। शीर्षासन के द्वारा शरीर के अवयवों पर पड़ने वाले प्रभाव का वैज्ञानिक तरीके से अध्ययन किया गया। शारीरिक व मानसिक रूप से संतुलित स्वस्थ्य व्यक्ति पर शीर्षासन के प्रभाव को देखने के लिए एक्सरे एवं ई.सी. जी. आदि उपकरणों की सहायता ली गई।

खाली पेट 30–40 मिनट शीर्षासन के बाद शवासन कराने के पश्चात निम्नलिखित निष्कर्ष निकले :

- शीर्षासन के रक्त को जमाने वाले पदार्थ सीरम में संतुलन आने लगता है। इससे हृदय रोगियों के दौरे रोके जा सकने की संभावना व्यक्त की है।
- रक्त में श्वेत कणों की वृद्धि जिससे जीवनी शक्ति व रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि पाई गई।
- शीर्षासन की स्थिति में हृदय पूर्ण दबाव रहित तथा वक्षस्थल को फैला हुआ पाया गया।
- फेफड़ों को पर्याप्त स्थान मिलने से फेफड़ों में आक्सीजन की 33 प्रतिशत वृद्धि पाई गई तथा श्वास की दर में भी कमी पायी गयी। निष्कासित दूषित वायु में आक्सीजन की मात्रा में 10 प्रतिशत कमी हुई।

भुजंगासन से मानसिक तनाव को दूर करने में सहायता मिलती है।

सर्वांगासन एवं मयूरासन को सामान्य स्वास्थ्य संवर्धन और दुर्बलता ग्रसित रोगियों के लिए अन्य आसनों की तुलना में अधिक उपयोगी पाया गया।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि व्यक्ति यदि नियमित दिनचर्या के रूप में प्राणायाम व कुछ आसनों को अभ्यास करे तो वह पूर्ण रूप से स्वस्थ्य रह सकता है। पूर्ण स्वास्थ्य से आशय सभी अंग अपना अपना कार्य करने का सामर्थ्य रखते हैं। मन एवं मस्तिष्क पर पूर्ण अधिकार हो स्वस्थ्य रहने के लिए शरीर व मन दोनों का स्वास्थ्य रहना आवश्यक है। यदि शरीर हस्ट पुष्ट तथा मन दुर्बल है तो वह रोगी है क्योंकि ऐसी शारीरिक स्वास्थता किसी कार्य के लिए उपयोगी नहीं होती है। इसलिए कि मन की प्रेरणा द्वारा ही शरीर को कार्य करने की प्रेरणा मिलती है। यदि मन ही अस्वस्थ्य होगा तो किया गया कार्य सुचारू रूप से नहीं हो सकेगा इस प्रकार मन स्वस्थ और शरीर दुर्बल हेतु मन द्वारा प्रेरित कार्य को शरीर की दुर्बलता निष्क्रिय बना देती है अतः मन और शरीर दोनों का स्वास्थ होना आवश्यक है यह प्राणायाम और योग के द्वारा ही सम्भव है। ❑

(लेखक दिगंबर जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़ौत (बागपत) में अध्यापक प्रशिक्षण विभाग में वरिष्ठ प्रवक्ता हैं।)

स्व-सहायता समूहों के काम में तेजी लाई जाए

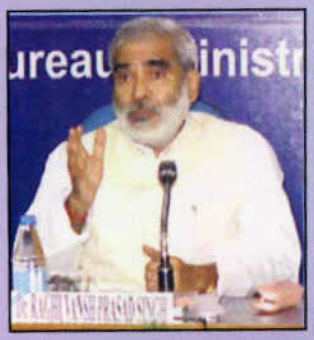

ग्रामीण विकास मंत्री डा. रघुवंश प्रसाद सिंह ने देश में स्व–सहायता समूह अभियान में तेजी लाने पर जोर दिया है। वे स्वर्णजयंती **ग्राम स्वरोजगार योजना** की प्रगति की समीक्षा कर रहे थे। असंख्य स्व–सहायता समूहों का गठन और सशक्तीकरण सुनिश्चित करने के लिए डा. रघुवंश प्रसाद सिंह जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों के कार्यों की निगरानी करने का निर्देश दिया। इस प्रक्रिया में, सुविधा प्रदाताओं/गैर सरकारी संगठनों को बड़े पैमाने पर शामिल किया जाना चाहिए। स्व–सहायता समूहों को शक्ति संपन्न करने के लिए समूहों के सदस्यों सहित शाखा स्तर पर मासिक संयोजन प्रणाली बनाने की आवश्यकता को रेखांकित किया जाना चाहिए।

वर्ष 2004–05 में एक हजार करोड़ रुपये के बजटीय प्रावधान में से 523.49 करोड़ रुपये की रकम जारी की जा चुकी है। जिला ग्रामीण विकास एजेंसियां 377.23 करोड़ रुपये इस्तेमाल कर चुकी हैं।

कार्यक्रम के तहत, अब तक 18.53 लाख स्व–सहायता समूह गठित किए जा चुके हैं जिनमें से 9.96 लाख समूहों ने ग्रेड–1 और 4.6 लाख समूहों ने ग्रेड–2 पास कर लिया है। 1.99 लाख समूहों ने आर्थिक गतिविधि शुरू कर दी है। इस प्रकार स्व–सहायता समूह अभियान में 20 लाख ग्रामीण परिवारों ने **स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना** के तहत आर्थिक गतिविधि शुरू कर दी है।

इस योजना में व्यक्तियों/स्वरोजगारियों को भी सहायता दी गई। अब तक कुल 49.21 लाख स्वरोजगारियों की सहायता की गई जिनमें 11.5 लाख अनुसूचित जातियों और 7.16 लाख अनुसूचित जनजाति के लोगों ने लाभ उठाया। महिला स्वरोजगार का प्रतिशत 22.2 रहा।

चालू वित्तीय वर्ष में **स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना** के तहत बैंकों द्वारा 25,7.67 करोड़ रुपये ऋण देने का लक्ष्य रखा गया है। जिसमें से बैंकों ने 48.43 करोड़ रुपये का ऋण दे दिया है।

डा. रघुवंश प्रसाद सिंह ने **स्वर्ण जयंती ग्रामीण स्वरोजगार योजना** के तहत सहायता समूहों के शाखावार सूचना एकत्र करने का निर्देश दिया। ग्रामीण विकास मंत्री ने यह भी निर्देश दिया कि कतिपय बैंकों के असहयोगी रवैये को गंभीरता से लिया जाए और इस समस्या से छुटकारा पाने के उचित उपाय किए जाएं।

स्वर्ण जयंती ग्रामीण स्वरोजगार योजना के तहत बड़े पैमाने पर ग्रामीण बेरोजगार युवाओं को कुशलता बढ़ाने का प्रशिक्षण देने पर जोर दिया गया। इस प्रस्तावित योजना का विवरण तय करने के लिए अपर सचिव की अध्यक्षता में एक कार्यबल का गठन किया गया है। स्वरोजगार सुनिश्चित करने के लिए एक वर्ष में एक करोड़ लोगों को प्रशिक्षण देने की योजना बनाई जा रही है। परिवारों को गरीबी रेखा से उपर उठाने के लिए मंत्रालय ने देश में विभिन्न स्व–सहायता समूहों के लिए 150 विशेष परियोजनाएं मंजूर की है। विशेष परियोजनाओं के क्रियान्वयन की प्रक्रिया संतोषजनक नहीं रही है। ग्रामीण विकास मंत्री ने इसे मद्देनजर रखते हुए कहा है कि क्रियान्वयन प्रभावशाली तरीके से और निश्चित समय पर हो। इसके लिए संबंधित एजेंसियों को निर्देश दिया जाना चाहिए।

डा. रघुवंश प्रसाद सिंह ने ग्रामीण क्षेत्रों विशेषकर ग्रामीण बाजारों को मजबूत बनाने के लिए स्व–सहायता समूहों के वास्ते आधारभूत ढांचा बनाने पर भी जोर दिया। विभिन्न अन्य सामाजिक सेवा कार्यक्रमों के साथ स्व–सहायता समूह अभियान के एकीकरण का भी उल्लेख किया गया। ❑

साभार : प्रेस सूचना कार्यालय

अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले में खादी और ग्रामोद्योग की भागीदारी

लघु उद्योग तथा कृषि और ग्रामीण मंत्री श्री महावीर प्रसाद ने **भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले 2004** में खादी और ग्रामोद्योग के मंडप, **खादी भारत** का उद्घाटन किया। उन्होंने मंडप में, विभिन्न खादी तथा ग्रामोद्योग वस्तुओं के अलावा, व्यावहारिक प्रदर्शनों को भी देखा।

इस मंडप में हस्त–निर्मित कागज निर्माण प्रक्रिया, साबुन निर्माण, शहद शोधन, रेशों से सुतली तथा दूसरी वस्तुओं का निर्माण, कुम्हार उद्योग और जैमिक खाद तथा कीटनाशक संबंधी तकनीकों और मशीनरी इत्यादि का व्यावहारिक प्रदर्शन किया गया है।

खादी के क्षेत्र में डिजाइनिंग का कार्य राष्ट्रीय डिजाइन संस्थान और राष्ट्रीय फैशन तकनीक संस्थान के सहयोग से किया जा रहा है। इस प्रदर्शनी में इन डिजाइनरों के डिजाइन किए हुए वस्त्र भी उपलब्ध रहेंगे।

वर्ष 2003 और 2004 तक खादी और ग्रामोद्योग का कुल उत्पादन 9681.77 करोड़ रुपये का रहा और इसकी बिक्री 11575.21 करोड़ रुपये की रही। इसी अवधि तक इस क्षेत्र में कुल 71.19 लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया गया है, जो अपने आप में एक कीर्तिमान है।

खादी और ग्रामोद्योग क्षेत्र में बाजार प्रतिस्पर्धा तथा गुणवत्ता का विशेष ध्यान रखा गया है। इस संबंध में **खादी, सर्वोदय** और **देसी आहार** नाम से विकसित तीन ब्रांड बाजार में प्रचलित हैं। **खादी** ब्रांड के तहत खादी के परिधान, साबुन–शैम्पू जैसे हर्बल प्रसाधन और शहद इत्यादि बेचे जाते हैं। **सर्वोदय** ब्रांड के तहत अचार, मसाले, नहाने का साबुन, अगरबत्ती आदि बनाए जाते हैं। **देसी आहार** ब्रांड नाम से दलिया, चावल और दालें बेची जाती है।

खादी कारीगरों और उनके बच्चों के कल्याण को ध्यान में रखते हुए खादी कारीगरों के लिए एक बीमा योजना शुरू की गई है।

खादी और ग्रामोद्योग संगठना द्वारा विभिन्न राज्यों में 49 ग्रामोद्योग परामर्श सेवा के केंद्र शुरू किए गए हैं, जो परियोजना तैयार करने में मदद करते हैं, कच्चे माल की स्थानीय उपलब्धता, मशीनरी आदि के बारे में जानकारी प्रदान करते हैं। ❑

साभारः प्रेस सूचना कार्यालय

आर. एन./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. 12057/2003-05
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.) -55/2003-5

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL 12057/2003-05
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2003-05
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रो. उमाकांत मिश्र, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित।
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया-II, नई दिल्ली-20 : संपादक : स्नेह राय